तुम्हें सूर्य का निखार दूँगा

लेखक
रा० बा० अग्रवाला

प्रकाशक
वन्दना पब्लिशिंग कारपोरेशन
माँपला (निकट दिल्ली) भारत

प्रकाशक
वन्दना पब्लिशिंग कारपोरेशन
सापला (निकट दिल्ली) भारत

संस्करण प्रथम १९७३
मूल्य दस रुपये

मुद्रक
हरिहर प्रेस,
चावड़ी बाजार दिल्ली ६

प्राक्कथन

मैंने अपनी समय समय पर प्रस्फुटित भावनाओं, विचारों को शब्दों के माध्यम से इस काव्य पुस्तक में अभिव्यक्त कर आप पाठकों तक पहुंचाने का प्रथम प्रयास किया है। मेरा विश्वास है—प्रत्येक स्त्री व पुरुष चाहे वह लेखक, राजनीतिज्ञ, समाज-सेवी सन्त, विद्यार्थी, कर्मचारी, व्यापारी हो—उसका, जिस समाज में वह रहता है और अंश है, उस समाज, संसार को प्रभावित करने वाले कर्म के प्रति अपने आपको अभिव्यक्त करना आवश्यक और स्वाभाविक है। मुझे आशा है पाठकों को यह काव्य-पुस्तक पढ़ते समय 'स्वयं' की अनुभूति होगी, क्योंकि ऐसा होने पर ही मैं अपना यह प्रथम प्रयास सफल समझूंगा।

(रा० बा० अग्रवाला)
जनवरी–१९७३

समर्पण

मानवता तथा विश्व शान्ति की
सेवा में समर्पित—

अनुक्रमणिका



प्रायश्चित

मैं भोर मे उदित सूर्य की—
मादक समीर सँगी रश्मि-किरण नही,
मेरी भावनाओ मे अग्नि की तपस नही,
मुझे शरत्-अमावस्या की रात म—
भोर का तारा होने का कदापि प्रायश्चित नही !

मैं झरने का स्पन्दन नही,
कल-कल करती बहती नदी का सगीत नही,
मुझे क्रन्दन मे अश्रुधार होने का दु ख नही !

मैं जीत का हार नही,
त्यौहार की वन्दनवार नही,
महात्मा के चरणो का उपहार नही,
अमरतत्व की आस नही,
मुझे जीवन-पथ का साधारण पथिक होने पर त्रास नही !

आभारी हूँ—पृथ्वी पर अपने समय मे होने का,
प्रकृति और मानवता का !
सत्य ! मुझे प्रायश्चित नही—
लघु होने का, लघु-कर्म करने का
मैं आश्चर्यचकित हूँ—
अपने, साथियो के प्रति अनुदार होने पर।



तुम्हे सूर्य का निखार दूँगा

तुम, अनजाने मिले राह म-स्वयं
भटक गया मजिल से-मैं
सोचता हूँ, चलता हूँ, करता हूँ
बना ढहता जाता है,
मिटते जाते ह पग चिन्ह
तुम्हारी आंधी मे !

तुम गहन अन्धकार हो,
रहते जीवन का अन्त
आज है तुमको मेरी चुनौती–
मैं स्वयं जल-इतना तपूँगा,
अन्धकार अपने आंचल मे भर–
तुम्हे सूय का निखार दूँगा !



चाहे तुम कितने ही ज्ञानवान क्यो न हो-ससार सदैव स
व्यक्तियो का ही परामश मानता है।

भारत का कल्याण तपस्या और जगलो मे नही, देश की शो
तथा अन्ध-विश्वासो से घिरी जनता के उत्थान मे है !

ससार असफल व्यक्तियो का उपहास करता है और सफल व्यक्ति
की पूजा !

मिट्टी उठा तिलक ही लगा पायेंगे

मेरा अनिश्चित भाव,
खामोशी,
प्रतीक्षा,
समय के साथ बनता, बिगडता,
इतिहास—
है नियति, अथवा
नियति बदलने का प्रयास !

अनन्त सम्भावनाये—
चुनने का व्यर्थ कम—
लगता है—राह मे खडे
सदैव,
मजिल की ओर बढने की
सोचते रहेगे हम !

राह होगी अपनी—
चलेगे अनजाने और, और हम
रौदी गई धरती से—
मिट्टी उठा तिलक ही लगा पायेंगे !



स्वतन्त्रता का मूल स्रोत निहित है विज्ञान मे इसके सार्वजनिक उपयोग तथा सर्वोच्चतम विकास तक मानव दास ही रहेगा ! मनुष्य मनुष्य का, अथवा मनुष्य प्रकृति का !

फल-साधन

किसी का अतीत–
क्यो बना मेरे भविष्य का प्रतीक
मेरे आगे बढने का प्रयास,
उन्नति का उत्साह-क्यो
उद्‌गम-स्थल पर ला, कर्तव्य-विमूढ कर देता है!

मेरी अपनी पूँजी,विचार बन जाते हैं साझे
लगता सदैव,
किसी और का अधिकार है मुझ से पहले—
इन सब उपलब्धियो पर!
नवीन बन जाता है पुरातन—
और पुनरावर्ती फल-साधन!



संसार ज्ञानी की अपेक्षा-सफल मनुष्य को अधिक महत्त्व देता है!
जिसको स्वय पर विश्वास नही संसार उस का विश्वास क्यं करे।

वासना, क्रोध तथा असत्य मनुष्य का प्रथम शत्रु है और मृत्यु तथ विवेक-हीनता मे सहायक!

ईश्वर की शक्ति तथा प्राकृतिक विस्तार मानवीय तर्क तथा ज्ञा से परे तक विस्तृत है!

प्रेम का अभाव मानवता तथा सभ्यता के पतन तथा युद्ध क सूचक है!

आस्था

सोचता हूँ, क्यों—
आशा के विपरीत विश्वासघाती निकले तुम ?
क्योंकि तुम अपने प्रति भी सच्चे नहीं हो—और
हो अपने प्रति भी द्रोही
मोती मन की गहराई में न खोज—
तुम खोजते हो
किसी और दलदली सतह पर, जिस में
कीचड की तरह कमल नहीं खिलते-वरन्
प्रत्येक प्रयत्न में और जकड़ा जाता-मनुष्य
धँसता जाता है, और
खो जाता है अनन्त गहराईयों में !
तुमने पाकर भी खोया है—
मिला कम, गँवाया अधिक है
हँसी में झलकता है मानसिक विकृतियों का चीत्कार—
देते हुए किसी आस्था को चुनौती !



मानवीय विकास के किसी भी प्रयोग का सामूहिक तथा सार्वजनिक होना आवश्यक है !

पूर्णता सुन्दरता से अधिक उत्तम है !

माधव के लिये प्रकृति उच्चतम शिक्षक तथा साध्य है !

मृत्यु को अजेय मानना, मूर्खता तथा अज्ञान है !

आँचल

आज जब मैं सब मे दूर—
और तेरे समीप हूँ,
सब सगीतमय, रगो व उत्तेजना से भरपूर लगता है।

मैं डूबना चाहता हूँ शून्य मे–
रहना चाहता हूँ निस्तब्धता मे,
दिल के तार और तेज झँकार कर उठते है–
और मन बहने लगता है अपने आप मे।

प्रकृति के सौंदय को समेट कर–
अपने आचल मे भर लूँ,
पर मेरा मैं, स्वयें सिमट कर,
उसका निज, प्रकृति के आँचल मे समा गया है।



यदि हम यहाँ पथ्वी पर स्वग बनाने मे सफल हो जाते है तो नरक मे जाने पर उसे भी स्वग बना लेगे।

स्वग मे करने को शेष कुछ नही, अतएव सच्चे मनुष्य के लिये नरक मे जाना कही अधिक श्रेयस्कर होगा।

जिस समाज मे त्याग का उचित महत्व तथा सत्कार नही, उस का अधिक समय तक बने रहना असम्भव है।

त्यागी मनुष्य सम्मान नही, ध्येय की पूर्ति चाहता है।

आभास

परिवतन है जीवन-कर्म,
क्यो भूत का आभास, बन गया मन की परछाँई
क्यो मैं, हम अकर्मण्यता की पुरातन बेडियो मे जकडे-
सहमे, कर्तव्य-विमूढ बैठे ह !

गन्तव्य की ओर बढाये पग की शक्ति,
प्रकृति के सहयोग, अपने निणय,
मानव की महानता,
और स्वयँ पर विश्वास है !

क्यो सशय के क्षणिक, असमय मेघ,
गरज, मचल उठते है-बरस कर आशा-अ कुर बहाने
जानते है तूफान निकल जायेगा,
और उनका अभिशाप, क्रोध-
जीवन बन कर लहलहा उठेगा !



नरक मे कल्पना की जाने वाली प्रत्येक वस्तु का विरोध ही मानवीय धर्म है !

भाई, भाई को लडाने वाला, आपस मे फूट डालने वाला शैतान, तथा अक्षम्य है !

अहिंसा और सत्य-पालन उच्चतम योग है !

आहत हो जाता हूँ

कितनी ही बार–
शीतल समीर का मादक स्पर्श,
स्वतन्त्र पक्षियों की चहक,
उनकी उन्मत्त उड़ान,
लहलहाते वृक्ष-पत्तों की झनझनाहट,
मेघ-शून्य शान्त नभ,
मुझे तेरे समीप, सम्मुख–
ला खड़ा करता है
और मैं अपनी क्षण-भंगुरता,
सभ्यता की बेड़ियों से–
आहत हो जाता हूँ।



रजनी नूतन दिवस की नवीन आशा की भूमिका है।

सुन्दर मृत्यु, सुन्दर जीवन का परिचय है।

एक की धूर्तता अनेक सज्जनता पर संशय का कारण बनती

स्वार्थ मनुष्य को शैतान बना देता है।

शत्रु का वार पतन का आधारभूत ढंग एक ही होता है
तुम उसे जानने में सफल हो जाओ, तो निश्चय ही उसे
दोगे।

निराशा मे मेरी आश्रय– ९।८.
अन्धकार ।
दूरी का भाव न रहा,
अनिश्चित से अन्त समीप था ।

और आज जब मैं–
पर्वत शृँखलाओ से घिरी–
आशा, अनगिनत रंगो से आच्छादित
घाटी मे निकल आया हूँ ।
प्रकाश मे चकाचौंध,
सशय, भ्रम मे तप रहा हूँ ।
मन, स्वयँ अस्थाई लगने लगा है,
क्योंकि—
सत्य है-यह जान गया हूँ ।



गीत-कवि के विचारो मे भरी उसके हृदय की सुन्दरता का प्रति-बिम्ब तथा प्रतीक है ।

निर्धनता-स्वाभिमान, स्वाधीनता तथा नैतिकता की प्रथम शत्रु है ।

भौतिकवाद, वर्तमान मे सृष्टि की वस्तुओं का अधिकतम उपभोग है ।

चोट

चोट,
आज फिर एक नई चोट,
मेरी भूल,
जीवन गति का आभास
जीवन के टूटते मूल्यो मे प्रयास-
किसका ?

मन की हार,
जीवन चौराहा,
अभिशप्त आत्मा, उसकी अनुभूति का-
मौलिक मूल्याकन !

खड़ा निहारता अपने को,
अपने पीछे के पथ को,
आगे बढने की होड मे-
भूलता जाता अपने को !

मेरा अस्तित्व, लगता अल्पकालीन
लघु,
युग-परिवतन श्रृ खला की एक कडी,
शोक-कराहट पर,
सोचता हूँ-
मुँह से आह कैसे, क्यो निकल गई ?



डर लगता है

रोती, फटी फटी आखो से टपकते आँसू–
गिरे लू झुलसी चट्टान पर,
एक आवाज आई–
न जाने आँसू के मिटने की,
या फिर थी प्यासी चट्टान की चीत्कार

आँखो ने सब देखा और समझा,
और मोतियो को अपने आचल मे सम्भाल लिया।

जब हाथ बिनने लगते है किसी और के मोती—
तो डर लगता है,
कही मेरी मुट्ठी की पकड और नमी से–
मोती व मन की चट्टान भुरभुरा कर ढह न जाये।



सफलता स्वयं अनेक दोष छिपाने मे समर्थ है।

प्रकाशदाता स्वयं निरन्तर जल कर ही जग मे प्रकाश देता है।
भूल-स्वीकार सुधार की ओर पहला कदम है।

पराजय मनुष्य की सहनशक्ति मे वृद्धि कर भविष्य मे सुधार का स्वर्ण अवसर प्रदान करती है।

पापी को भी उसके आधारभूत अधिकारों से वंचित नही किया जा सकता

प्रकाश पुँज

भक्ति, पूजा—
यौगिक साधना,
मन्त्र उच्चारण, क्या है ?
मैं जान कर भी नहीं जानता,
नहीं समझता ,
मैं तार्किक, साधरण मानव की–
सेवा अपना धर्म मानता हूँ।

मेरा माप-दण्ड—
मानव, समाज की सेवा,
सरजनात्मक कर्म,
विकास में सक्रिय सहयोग है,

मुझे मानव मे विश्वास है,
मनुष्य के भविष्य मे आस्था है,
मेरा प्रकाश-पुँज–
स्वयँ धरा पर तपता सत्य है।



व्यापार की उन्नति व्यक्ति के विश्वास, वचन पालन तथा उसके निजी व्यक्तित्व के प्रचार पर निर्भर है।

अत्याचार सहना, पशुत्व का आधिपत्य स्वीकार करना है।

आत्म-निर्भरता स्वाधीनता की ओर पहला क़दम है।

आश्रय

ठुकराने वाले तेरा लाख शुक्र–
देख तेरी छोटी चारदीवारी से निकल,
उसके कितने विस्तृत आश्रय मे आ गया हूं।

तेरे घर के कोलाहल से–
झरने की कल कल अधिक संगीतमय है।

वहा की धुआधार हवा से–
यहाँ की शीतल समीर अधिक मादक है।

तेरी दासता के पतन से–
यहाँ की स्वतन्त्रता मे अधिक स्वाभिमान है।

तेरे घर के आश्रय से–
यहा के साम्राज्य का ऐश्वर्य कहीं अधिक है।

वहाँ के अन्धकारमय वातावरण से–
यहाँ सत्य प्रकाशमान-और है भविष्य उज्वल।



निष्क्रियता विकास से विमुख होना, तथा प्रकृति के प्रतिकूल है।

विश्वास करने से विश्वासपात्र बने रहना अधिक कठिन है।

मित्रता मनुष्य के अपने स्वार्थ को चुनौती तथा पारस्परिक उदारता की प्रतीक है।

खामोश न हो

जब तू खामोश होता है–
विभिन्न प्रकार के अनगिनत प्राणीयो से भरा ससार
सुनसान लगता है ।

प्रत्येक ह्रप मे झाँकता है मृत्यु का साया—
सृष्टि ठहरी हुई-और कुछ मौन सी हो जाती है,
मधुर गीत-राग वैराग्य बन जाते है ।

तेरी एक ही आवाज युगादि बन जाती है,
मेरी यही विनती है-तू जोने
और अनन्तकाल तक खामोश न हो ।



सदैव वनमान मे स्थित, प्रकृति की किसी भी वस्तु अथवा प्राणी का पुनजन्म असम्भव है ।

कुरूपता ही प्रशसा का मूल्य जानती है ।

हमे अपने पापो का प्रायश्चित स्वयँ करना होगा ।

दण्ड पर आधारित न्याय, नैतिकता तथा मानवता पर किया जाने वाला सबसे बडा आघात है ।

निर्दिष्ट पथ सुनिश्चित लक्ष्य पर ही ले जायगा जो अमूल्य मानव जीवन का अपव्यय मात्र होगा ।

वरदान

मुझे मुक्ति का वरदान नही पुनर्जन्म
संघर्ष
जीवन पूर्ण बनाने का उत्साह प्रदान कर !

मुझ पर करुणा, दया न कर,
आत्म-सम्मान, कर्तव्य, गौरव,
अधिकार प्राप्त करने की सामर्थ्य दे !

मुझे उपकार, कल्याण के साधन नही बस
दूसरे के उपकार, सहायता की ओर मेरी आँखे न उठे,
हाथ न फैले !
विपत्तियों से संघर्ष करने—
साहस-धैर्य से पथ पर गन्तव्य की ओर बढने का वरदान दे !



क्षमा, मानसिक विकास तथा हृदय की विशालता है ।

भगवान के साथ प्रत्येक मनुष्य अकेला है—उसके सम्मुख प्रत्येक प्राणी नग्न, तथा बाह्य आवरण सामाजिक शिष्टाचार मात्र है !

स्नेही तथा विश्वासपात्र मनुष्य का सत्सग स्वयं को उदार बनाता है !

राज्य बडा संगठन होने के कारण ही स्वयं दण्ड देकर भी सुरक्षित रहता है !

अभिशाप

मुझे अमरत्व मुक्ति नहीं-पुनर्जन्म
स्वर्ग नहीं-कर्म भूमि चाहिये
देव न बना मानव रहने दे।

मुझे भौतिक वैभव के सुख से,
अभाव के अनुभव अधिक प्रिय हैं।

तुझको खोजने में समय न गंवा–
मनुष्य को, अपने को पहचान समझ सकूं।

सफलता का अहं, विजय का उल्लास नहीं,
तिरस्कार, हार में शान्त रहने की सामर्थ्य दे।
मुझे स्वामी, दाता नहीं,
मित्र चाहिए-रहने दे। वरदान नहीं अभिशाप दे।



उचित तिरस्कार तथा आलोचना उन्नति का द्वार है-परन्तु चाप
लूसी मनुष्य का पतन।

त्याग का अर्थ, अधिकारों का छोड़ना नहीं वरन् उन्हें सुरक्षि
त करना है।

मेरा ईश्वर सदैव मेरे निकट है-और उसके साथ दौड़, जीवन क
कठिनतम कार्य।

पराजय

लक्ष्य !
मेरे पौरुष का उपहास,
पराजय—
मेरी योजना, कम-व्यवस्था पर प्रहार !

सोचता हूँ, बैठता नही,
गाता हूँ, रोता नही
मै आशावादी जो हूँ-और हूँ रहस्यवादी !

कठिन समय—
सदैव मेरे पग नयी मजिल पर चल पडे है,
मैंने बुराई मे भी कुछ अच्छा ही पाया है !



विजय प्राप्ति के लिये, शत्रु को उसके प्रिय से लडा कर-शत्रु के शत्रु से मित्रता कर लो !

सुचारु रूप से कार्य करने के लिये शारीरिक तथा मानसिक विकास अनिवार्य है !

प्रत्येक मानवीय जीवन सामाजिक इतिहास की पृष्ठ-भूमि को चुनौती तथा सृष्टि मे निश्चित समय पर शृ खला का एक महत्व-पूर्ण अ ग है !

पाप-सज्ञा मानवीय दृष्टिकोण की सकीर्णता !

दूर

कितनी रातें, कितने दिन,
अनगिनत पतझड और वसन्त,
बीते तेरी यादो भरी प्रतीक्षा मे।

तुम्हे कभी जाना नही,
न कभी जानने का प्रयास किया,
जब भी सोचा, मन ने चाहा,
लगा तुम मेरा अभिन्न अ ग हो।

तुम्ह पाने की लालसा—
स्वाभाविक उतावलापन लगने लगती है,
क्योकि-हम दूर है न चाहते हुए भी।



व्यग्य तथा कटाक्ष स्वयँ के स्वभाव को बिगाडता है, तथा दूसरे को शत्रु बनाता है।

प्रसन्नता यदि जीवन है तो चिन्ता चिता और सशय निश्चित मृत्यु।

शत्रु, शत्रुता पर विजय प्राप्ति के लिये शत्रु के सहयोगीया मे उस की प्रसन्सा विष का काम करती है।

मानव-जीवन, अनन्त उपलब्धियो सम्भावनाओ से भरपूर है।

वतमान

आज अपने घर से—
बहुत दूर सुनसान वीराने मे—
इतिहास के स्वर्णिम क्षण जी रहा हू !

मैं जानता हूँ वह नही-जो कभी था
दुख, पश्चाताप क्यो ?
वह समय, स्थिति भी तो नही–

मैंने भूत, भविष्य नही—
सदैव वतमान जीया है
मेरा स्वाभिमान, मान
आन-मर्यादित भूत भी सदैव वतमान है !

मेरा वह भूत,
यह वतमान ही—
मेरा भविष्य है !



परतन्त्रता तथा अत्याचार को सहना, ईश्वरीय सत्ता तथा सत्य का अपमान है !

अच्छी पुस्तकें सुन्दर विचार बनाने तथा समय व्यतीत करने मे मनुष्य की सर्वोत्तम मित्र है !

अनूठा योग

यह बोझ जो मेरी असफलताओं—
पतन ने हृदय पर रख दिया और
चिन्ताओं के झञ्झावत ने झकोड कर ताजा कर दिया है
अभिशाप नही वरदान है!

यदि मै भूलकर गलियो मे न भटका होता,
और तेरा समथ आशिष पहले प्राप्त हो जाता, तो
जीवन मेरे लिए भेद, रहस्य ही रहता!

तुम्हारे स्वप्न लोक की सुखद समृति म—
वास्तविकता से दूर हट पडा मे—
सागर की बूद–
अपने अहँ मे अस्तित्व को ही भूल चला था
तुम्हारी बार बार की पुकार,
दुतकार, धिक्कार, ठोकर ने—
मुझे माज कर, स्वर्णिम चमक दी है!
और अन्तर की ज्वलन्त अग्नि मे–
प्रकाश का अनूठा योग हो गया है!



अध्यात्मिक प्रगति मनुष्य की बौद्धिक तथा नैतिक उन्नति है तथा उसका सामाजिक परिवतन के साथ सामञ्जस्य आवश्यक है!

पहचानता हूँ

ग्रीष्म-वर्षा की चन्द्रमा-आच्छादित रजनी मे—
शीतल ब्यार मन-तन्तुओ, तारो को छेड अपने
तुम्हारे विषय मे सोचने को बाध्य कर देती है !

तुम्हारे विस्तृत, अनन्त वैभव की कल्पना,
उपभोग का सँयोग,
मेरे मस्तिष्क को चरण रज तक झुका देती हे ।

क्षणिक अधिकार की भावना मे खोये, भूले अहँ को—
अपना अन्तिम क्षण सुझा देती है !

गली गली, दर दर भटकते विश्वास को—स्थिरता
लक्ष्य दिखाने का मनहर प्रयास करती हे
और मैं सबसे, अपने से अनजान, एकाकी—
भूत की कड़ीयाँ मिलाने,
भविष्य के निर्माण मे लगा रहता हूँ ,
क्योकि-मन के अन्धेरे कोने मे-कही
अपने अस्थाई अस्तित्व की चचल, तार्किक बुद्धि पर
आस्था होती है ! और यही पर
अपने आपको, तेरी उदारता, महानता को पहचानता हूँ !



निष्क्रियता—मस्तिष्क प्रगति-विराम तथा ग्रहण-शीलता का अभाव है !

पराजय

पराजित हूँ इस देहली बारम्बार, पर हुआ नही निराश,
चिरकाल से अनन्त मे तुझे खोज रहा हूँ–
तुझे पाकर अपने को पहचानने के लिए !
मै जानता था-पराजय मे ही जय, जीवन है–
अन्यथा-लक्ष्य अकर्मण्यता मे डुबा देगा !
जब तुम मुझे मिले-लगा तुम तो सदैव से मेरे साथ हो–
आँख मिचौनी का खेल खेलते हो !

आज जब मिल गए हो-हाथ छोडकर
सम्भावनाओ का आलिंगन करने को मन नही चाहता !
यद्यपि यह जय मेरी पराजय का निकृष्ठ रूप है—
क्योकि इस सम्मान का श्रेय, तुम्हारी महानता है !

'जब जब मैं तुझे अकेलता आगे बढा—
तब तब स्वयँ अकेला गया हूँ,
नत मस्तक असत्य, अपमान मे डूबा हूँ !
आज अपनी पराजय से-और स्मृति चिन्हो की माला से
तुझे अलकृत करूँगा,
मेरा दर्प चूर हो जायेगा–और
ऊपर से निरन्तर निहारते दो नैन,
अपने सबल हाथो मे मुझे सम्भाल लेगे, और धरा पर
मेरा कुछ भी तो शेष नही रह जायेगा।'



सामर्थ्य

मुझे साथ लाकर जीवन-उषाकाल मे तुने—
जीवन-पर्यन्त साथ खेलने का आश्वासन दिया।
मैं सशय हीन, तेरे हाथो मे औरो के साथ खेला—
उनमे सदैव तुझे ही देखा, और
दैव को तुम्हारी इच्छा समझा।

बार बार पराजित होकर, मिटकर, पुनजन्म लेकर भी
चिर आस्था, विश्वास को स्थिर, निहीत रखा।
परन्तु आज जब तुने स्वयँ मुझे पूण-स्वामित्व का
आभास दिया और कसौटी पर रखकर—
असफल घोषित करने के साथ साथ
मेरा कर्म-फल हथेली पर रखा-तो
मन बिलख उठा क्योंकि तुने प्रतिस्पर्धी के साथ मिलकर
न केवल उसे बचाया, बल्कि अपना निकटतम बन्धु बना लिया।
नीति के इस खेल मे तुने मुझे—
महाप्रलय के द्वार पर लाकर खडा कर दिया।
क्या अब भी तुम्हारे सहयोग, दया के लिये-
पूजन, अचन, प्रार्थना करूँ?
और तुम्हारे विश्वासघात, अपनी असमथता का नग्न रूप
ससार के सम्मुख रखूँ?
यह भी तो मेरी सामथ्य के बाहर है।



पूर्ति

आज मैं चुप और शात हूँ–
स्तब्ध वातावरण मे ऊबता नही,
नीरवता मे अपनापन सजीव लगने लगा है !
मै मुँह उठाये दूर क्षितिज मे—
नेत्र स्थिर कर, दत्तचित्त हूँ
खोज मे विफल होने पर
मेरी खोज, प्रयोजन मुझी मे छिपा लगता है !

तुमने मुझे राह से हटाया
विचलित किया,
मेरे चारो ओर अन्धकार, अन्याय
अशान्ति, घृणा का साम्राज्य,
मानवीय कटाक्ष,
मानसिक असतुलन का वैभव—
सभी कुछ !

परन्तु तुम्हारा भय का बीज—
मुझ मे अभय वृक्ष बन उपजा,
आश्चर्य
अभिव्यक्ति, ज्ञान
गहराई, इसी का फल है !
मैं अपनो मे दूर, अनजानो मे अपना,
जीवन-सपनो मे यथार्थ का प्रादुर्भाव
असफलता, सफलता मान, अपमान से अछूता
अकर्मण्यता मे कर्म का प्रयास,
विनाश मे निर्माण का श्रेय,
अभाव मे सतुष्ट,
और मेरी हार बन गई-मेरे अहँ की पूर्ति !

श्री कुसलो ना[illegible]

स्टेशन मंदिर, [illegible]

मन्दिर
हा ! जहाँ भगवान की पूजा होती है !
देवालय, जिसमे सामग्री, भेट का अम्बार लगा है,
भीड द्वार पर-फटे-हाल ककालो की
भूखे को ईश्वर से भीख जो मिलती है !

हृदय का भगवान रो उठा है—
अपने रूप पर, फिर भी मौन है
प्रत्येक कर्म स्वीकृति तथा नियन्त्रण का खेल जो है !
सम-चित, स्थिर तथा आसक्ति रहित,
बन्धनहीन, विरक्त और फल-रहित कर्म मे स्थित
अन्धकार मे प्रकाश-स्तम्भ,
आत्मा की ज्योति, ज्ञान, चराचर सृष्टि का सचालक,
वह पवित्रता का प्रतीक है—
पाप-मनुष्य का स्वयँ निर्मित, पतन है !

जानते हो ? आज उसी मन्दिर का द्वार बन्द है !
भीड ने स्वर्ग, ईश्वर, मन्दिर
अपना बाहुबल जान लिया है, पहचान लिया है
भीख को अपमान-सम्मान को अधिकार कहा है !
आज वह सम्पन्न है, प्रसन्न है
मनुष्य ही-सत्य है, प्रेम है, ईश्वर है
और है मन्दिर !

□

उदासीन और मौन, पर निराश नही

हा ! मन जीवन मे उदासीन
भूलना चाहता है मनुष्य को, मनुष्य द्वारा हुए निर्माण को
सृष्टि को ईश्वर को, अपने भाग्य-विधाता को ,
स्मृति-पटल पर छा रही अपनी भूले,
अविश्वास, विश्वासघात-और अपना पतन !

भूल चुका हूँ उपकार, दया जो कभी की थी ।
हाँ ! नीरस, अपने मे दु खी, अतृप्त
फिर भी कही है आशा की कोई किरण,
वही धोखा, वही नभ मे ऊँची उड़ान ,
पँख जो नही कट अभी, जीवित जो हूँ !
मृत्यु ही क्या वार वार छू कर चली जाती है ?
क्यो करता हे शत्रु छुपकर वार वार वार
जानता है वो मुझ से कुछ नही छिपा !

आज मैं उदासीन हू समाज से, ससार से
पास के पडोसी से उसकी आवश्यकता मे ।
प्रकृति भी तो उदास है—
अपने और सभ्यता के भविष्य पर ,
युद्ध, अविश्वास के वातावरण मे सब अन्धकारमय जो है
साम जो घुटता है-उदास हूँ पर निराश नही,
विश्वास जो है मनुष्य के जीवन प्रेम पर ,
फिर भी सत्य है-उदासीन हूँ-और हूँ मौन !



गीत

गीत !
भक्ति, वीर-रस और नवीन भावा से भरपूर—
अनगिनत लिख डाले है लोगो ने ।
किसी ने कल्पना मे युद्ध देखा और लडा होगा,
औरो का ईश्वर, आत्म-साक्षात्कार अवश्य हुआ होगा
कितनो ने ही भय, हर्ष, शान्ति, चिन्ता, प्रेम तथा द्वेष को-
चित्त मे रखकर-
लिखा होगा सुन्दर गीत !

गीत ही तो है-जिसे लिखने के लिए—
कुछ ने अभिव्यक्ति को भी खोजा होगा,
सुन्दर शब्दो मे सजाने के लिए—
प्राकृतिक भाव को शब्द कोष की भी आवश्यकता हुई होगी !
ये सब गीत-एक ऐसे गीत पर विजय पताका फहराते है,
जो विजय और पराजय से दूर,
गीतकार की आत्म-अभिव्यक्ति मे गुजार है
जिसमे भाव है पर श्रृंगार नही—
यह गीत है-धरती के मनुष्य का गीत !



शान्ति मे वृद्धि, वैभव व प्रेम का समावेश है !

प्रकृति की क्रियाशीलता विश्व की इच्छा-शक्तियो का सयोग मात्र है !

गगा

शीतल, मादक, समदर्शी
शान्त व गम्भीर स्वभाव तेरा,
हृदय मे उठती विशाल लहरे,
जलगति से कल कल करता सगीत
मुक्ति न दे-बान्धता है क्यो मन मेरा ?
मैं पथिक बन गई तू आवास क्यो ?

धर्म-मर्यादा, धर्म सम्बल,
जीवन माप-दण्ड
गुण जीवन-धर्म तेरा, कैसे बनती
गुण-हीन का अन्धविश्वास, आश्रय ?
जीवन सदेश, जीवन प्रभात,
जो बना ली गई सन्ध्या की बेला !

चिर आस्था का कल्पित इतिहास,
अज्ञान, पाप और भावना का अद्भुत सगम
जीवन मुक्ति स्रोत—भत धरोहर तेरी
बनती सुन्दर भविष्य का वरदान !
सम्मुख है तू—पर
चाहते हुए भी भूला नही पाता अपने को,
मन नही होता—
अपनी लघुता विलीन कर दू तेरी महानता मे,
मेरे पापो का प्रायश्चित करे तू-
और हमारा मिलन दे, मुझे मेरे कर्मफल से मुक्ति !

मृग-मरीचिका

जीवन के प्रत्येक चौराहे,
मोड़,
प्रत्येक प्रयास, आधार पर
तुम मुझे एक ही भंगिमा में मिले ।
तुम्हारे साथ उड़ती धूल से
ढकते जाते हैं जीवन-चिन्ह !
तुम्हारा नियमित प्रसार,
प्रयास,
समय की पीढ़ियों में विभाजित योजना—
व्यर्थ बाधा !

परिवर्तन है परिवर्तन , और
माप-दण्ड नवीन युग का
और उत्थान
मानवता और समाज का !
समय के साथ बदलते मूल्य,
ईश्वर और समाज का भी—आज
अन्तिम लक्ष्य बन कर रह गया है—
मानव !

उसी मानव को भूल,
आत्म विस्मृति की अनन्त गहराईयों में डूब,
तुझे पाने की लालसा—
वास्तविकता और यथार्थ से दूर—
भ्रमात्मक मृग-मरीचिका है !

□

आज

आज वह दिन है—जब
मैने अपना जीवन-दर्शन बदल,
राह को नया मोड दिया है।
छोड पुरानी यादें,
भूला कुंठित नियम,
मैंने जो चित्र बनाया—
भाव अपनाया है, उसमे
उदासीनता नाम को नही,
भय को स्थान नही,
अपने को खुली, स्वस्थ हवा मे छोड,
बढते जाना है-अन्त तक
राह पर बढते जाना है।

आज अत्याचारी के वार से—
बचाव की प्रतीक्षा न कर,
मुझे न्याय, सत्य, मानवता का सम्बल ले—
अन्याय पर वार करना है—
वार करते रहना है।



प्रसन्नता जीवन वीणा का मधुरतम राग।

कोई किसी को नही बनाता, मनुष्य स्वयं अपने विचारो, कर्मों और शक्ति से ही बनता है।

विषपान

यह निर्मल देह, शुद्ध भाव
किसने, क्यों किया—
विष का संचार ?
अंधियारी, कष्टदायनी,
बन गयी रात
हर पल, हर छन
सोचता, राह तकता—
कब होगा मंगल-प्रभात !
दुष्ट, शत्रु और घातक जन की—
आडम्बरमय सहानुभूति,
लगता एक भटकाव !
शुभ-चिन्तक कौन, किसका ?
यह कसौटी का समय,
छाटना है मुझ को वह दुष्ट—
जिसने निज स्वार्थवश—
किया है यह उत्पात !
जीवन-ज्योति तो यों ही जगती रहेगी—
यह, न बन पायेंगे ठहराव, वरन्—
एक और नयी मंजिल का होगा चुनाव
और यह मंजिल-पहले से और सुदृढ़,
चलने में छोटी,
अनगिनत कार्यों की कसौटी,
पहुँचेगी समय से पूर्व ही अपने गन्तव्य पर,
जहाँ होता है अमृत-संचार !

□

पूर्ण-विराम

भोर हो या सन्ध्या,
पृथ्वी व वनस्पति,
मेघ या लहर,
नित नये-नये रूप, शृ गार!
परिवतन ही जीवन-कम,
जीवन, मृत्यु-द्वार ही क्यों—
पूर्ण विराम?



द्वन्द्व

स्थान, कम, विचार और निष्ठा मे अस्थिर
स्वयँ, मानवता व शान्ति पर सशय
विश्वास पर अविश्वास,
फल के प्रति अनिश्चित,
मन मे द्वन्द,
यह सब क्यो? कैसे? किस प्रयोजन से?
सब सत्य है, पूर्णता की ओर अग्रसर है,
निष्ठावान है भविष्य के प्रति,
सु दर है, भला है
सामीप्य मे है- साधारण, निश्छल मानव क्यो? कैसे?
यह मन का द्वन्द-मानवता का युद्ध,
है विनाश का रूप, सहार
मैं, हम फिर भी चुप- चि तन व चिन्ता मे लीन,
बैठे है कुछ होने की प्रतीक्षा मे-तकते शू य मे,
सम्भवत हमे शून्य मे प्यार है-शू य की चाह है।

बोध

उदासीन होता हूँ—
मन अपने वातावरण से विद्रोह कर उठता है,
सास घुटने और दिल तीव्रगति से धडकने लगता है, तो
न जाने कैसे—मैं अपने आप को
तीव्र व उच्चतर चेतना के सूक्ष्म जगत मे पाता हूँ।

जहा, इस जागृत अवस्था मे हुई उपलब्धि—
मेरी बनायी और बाधी हुई सीमाओ को तोड—
अनन्त के द्वार खोल देती है, वहाँ
समय की परिधि मे घिरी आकांक्षाओ की अकिञ्चनता,
कर्म की महत्ता जीवन की सार्थकता का बोध होता है।

स्थूल मे सूक्ष्म, जीवन मे अन्त,
विपदा में आनन्द, सुख मे दुःख
मृत्यु मे अमरता, स्वतन्त्रता का वास है,
फिर किसका, कुछ करने का-मिथ्या प्रयास है।



अवसर की पहचान सफलता का रहस्य।

उन्नति समय, का सदउपयोग।

सम्पदा—जीवन का आवश्यक अंग।

मैं

आज मेरा मस्तिष्क,–विवेक
विचारों के भार से असंतुलित होने लगा है,
मेरा जीवन परोपकार, त्याग
अपने कर्तव्य को पर-सेवा समझने लगा है।

मैं अपनी लघुता भूला मेरा अहँ बढ़ने लगा,
जितना ही अपने को समझा, पहचाना
उतना ही स्वयँ को अपरिचित लगने लगा।
क्यों होता है ऐसा ?

□

तूफान पलटा खायेगा

टूट पड़े विपदाओं का पहाड़,
मन में संशय, निराशा भर जाये,
परिस्थिति हो असह्य तथा प्रतिकूल,
पग-पग पर मिले विश्वासघाती और शत्रु,
एक पल भी ठहरना कठिन हो,
सांस घुटने लगे,
अन्धकार, द्वेष के सिवा कुछ न सूझता हो,
वही समय, स्थान है—
जब तूफान पलटा खायेगा।

□

जीवन-चित्र

नूतन जीवन,
नवीन उत्साह-और आगे
कर्म-भूमि !
सतत प्रयत्न,
आत्म-निर्णायक क्षण, बढ़ता
आत्म-विश्वास !
दृढ़ संकल्प,
स्थिर मन, मिलती
जयमाल !
सुन्दर भाव,
अनगिनत रंग-कर्म, पूर्ण
जीवन चित्र !



सम्भावनाओं का अन्त /

मेरा विश्वास,
तुम्हारा छलिया व्यवहार, विश्वासघात
तुम्हें कुछ न दे—
मुझे पाषाण हृदय, संशयी बना देता है !
मेरा यह अनुभव बनता है—
कितनों की सम्भावनाओं का अन्त !

शक्ति पर अविश्वास

हे ! शक्ति-निधान,
सृष्टि के स्वामी, निज-आत्म,
जीवों के आधार,
उत्पन्नकर्ता और महाप्रलय का कारण,
रचयिता और विनाशक, कर्मों के स्वामी,
मानस-पटल के अद्वितीय चित्रकार
आपकी शक्ति और उसका खेल विचित्र, रहस्यमय है !

कभी इस जन को अ गीकार किया था,
उद्देश्य और लक्ष्य के लिए चुना था,
पथ समाप्त, लक्ष्य समीप है
प्रस न्नता, शान्ति और गौरव से श न्य हूँ !
कही भूल से तुमने त्याग तो नही दिया,
मेरा, मानवता का लक्ष्य—
पूण है, सत्य है, और है स्पष्ट !

जग जानता है तुझ सगी को, ऐसा न हो
तुम्हारी मित्रता तथा शक्ति का अपमान हो, उपहास हो
मनुष्य को तुम्हारे न्याय पर,
तुम पर अविश्वास हो।



मानव

परीक्षा का वातावरण,
उपेक्षा, तिरस्कार के कटाक्ष,
विपक्षी का प्रचार, प्रहार,
भय, घृणा के बीज न बन—
आत्म-निरीक्षण के क्षण बन गये है !

सन्तोष,
विश्वास,
परिश्रम,
कर्म, शान्ति,
मेरे सहयोगी है !

चुप्पी,
सन्नाटा,
स्थिरता,
सभी मित्र बन गये है !

देवत्व की चाह मे,
मानव पिछड़ा नही,
अहिंसक है—
हिंसा से घृणा नही करता।



सकल्प

म था-जो था,
आज हूँ कुछ और
पतन और हार ने दिया नया विश्वास,
चिन्तन का प्रयास,
जीवन, सफलता का भेद , और
दृढ़-सकल्प हो गया निणय,
आज जो होगा—कल मेरा होगा !

काल बाध न सकेगा,
बन्धन जायेगे टूट
स्वतन्त्र जीवन हो कर रहेगा अभिव्यक्त,
और उपलब्धि—
होगी मानवता का अधिकार !



भय, जीवन विष !

अंधविश्वास है जीवन का अभिशाप !

पारस्परिक वैमनस्य का प्रसार, विष का सचार !

आशावादी मनुष्य, सदैव सफलता का अधिकारी है।

निश्चय

समाज-सेवा, देश-सेवा—
स्वयँ के अहँ की पूर्ति
निबल, दलित की रक्षा—
शक्ति सम्पन्नता का छलावा।
किसको किसके अस्तित्व की चिन्ता,
नैतिकता आडम्बर—
शोषण की ढाल।

तुम्हे स्वयँ कर्म कर—
शक्ति सम्पन्न हो, अपना उद्धार करना होगा।
अपने अधिकार को स्वयँ पाना होगा—और
अपने सपनो को स्वयँ साकार करने का—
करना होगा निश्चय।



विराम-चि ह

विरह दावानल मे-आशाओ की आहुति,
चिन्ताओ मे मेरी—सशय का आवास,
प्रतीक्षा की घडिया—करती सपने साकार,
सोचता निद्रा मे—जागरण समय-प्रभाव
जीवन विराम-चिह्न पर—खडा हुआ मैं।

उपहास

विजय के शुभ मूहत—
मैं क्यो, शकित, भयभीत हो
ठहर जाता हूँ ?

निबल, दलित—
जिनका जीवन-कम मुझ से है
भुलावे मे आ—हानि उठाता हूँ
और विश्वास को लगता है धक्का ।

डगमग होती दिनचर्या,
सम्मुख लगती हार लिपटी अपमान मे—
करते हुए आत्म-सन्तुष्टि और सयम का
उपहास ।



धैय का फल   निपुणता और सफलता ।

जिसको जीवनकला मालूम है वह ऋषि है ।
—स्वामी राम तीथ

आत्म सयम शालीनता का प्रधान अ ग है ।
—अज्ञात

चित्र कल का

गति से पीडित,
जीवन से निराश,
सघर्ष से उदासीन,
परिवतन की योजना रहस्यमय ? निरथक ?

समाज का परिहास,
बन्धुओ का कटाक्ष,
विपक्षीयो के प्रहार
मानव-सेवा का प्रयास-समर्पण ?

लघु जीवन,
महान कम,
सत्य, कर्म-उपासना,
मेरा अपना परिचय ? उपहार ?

गतिमान है स्थान,
पीछे छुटते जाते ठहराव
पार्थिव शरीर विराजमान,
मस्तिष्क का तूफान-है चित्र कल का !



भली भाति अपने कर्त्तव्य का पालन करके सन्तुष्ट हो जाओ और दूसरो को अपने विषय मे इच्छानुसार कहने के लिए छोड दो !
—पैथागोरस

आज तक

तुम करते हो अन्याय, अत्याचार—
कहते हुए नीति और अधिकार,
बनते हो कानून, मानवता के दोषी—
रोपते हुए शत्रुता का बीज !

इच्छा-तुम्हें पूजे संसार,
और—समझे भाग्य-विधाता,
अन्नदाता और रक्षक !

मन काला, ढग निम्न कोटि का-और
अपना कहने को शेष कुछ नही फिर
क्यो करते हो सामाजिक-धन, शक्ति का दुरुपयोग,
जानते हुए—तुम नेता अधिकारी हो असत्य के सहारे,
जिसका जीवन था-आज तक ।



उस कर्त्तव्य का पालन करो, जो तुम्हारे निकटतम है ।
—गेटे

जब तुम कर्त्तव्य के आगे इच्छा का बलिदान करो तब लोगो को अगर वे चाहे, हँसने दो, तुम्हे आनन्दित होने के लिए अनन्तकाल पडा है

—थ्योडोर पार्कर

प्रगति

तुमने मेरी उँगली पकड—
अपनी ढलती उमर के साथ—
मुझे बचपन मे ही ला खडा किया
श्मशान के किनारे, अन्त के सम्मुख ।

मुझे चलना है, दौडना है इतना तेज
नाप दूँ मजिल को दो बार
विपत्तियाँ रोक न पाये,
शत्रु का भय न छु पाये मन,
ईश्वर, भाग्य न रह सके अधकार मे,
और मै बनूँ—
तुम्हारे मोक्ष की आशा ।

तर्क सँगत ज्ञान—प्रगति का वरदान
धरती को सँवारते दो हाथ और जीवन—/
देवत्व का माप ।



तेरी बुद्धि को और हृदय को जो सच मालूम हो वही तुझे करना चाहिए ।

—गांधी

लफ्जो को जाने दो, कृतियो को जवाब देने दो ।

—नेपोलियन

वन्धन

पाप, पुण्य का भय,—
अन्धकार, निराशा मे क्योंकि
है आत्म-विश्वास का अभाव !

भटकते,
जीवन सग्राम मे हारते-पथिक,
विवेकी, ज्ञानी वनो
शान्ति, प्रेम, विज्ञान को जीवन मे भर लो !
पृथ्वी पर मानव मे आस्था रखो,
उसकी आधार-भूत आवश्यकताओ का करो चिन्तन
और तुम्हारे कर्म से हो उनकी पूर्ति ।

हृदय मे न रहे युद्ध का भय, पीडा,—
पृथ्वी ही बना डालो स्वर्ग ताकि
मृत्यु के पश्चात्-जीवन, स्वर्ग भोग की चाह न रहे !

आज समय है-अतिमानव, इसी जीवन मे
सपन से करने का साक्षात्कार
तुम्हे बनना है स्वयँ का भाग्य-विधाता,
क्योंकि जन्म से ही हो मुक्त—
और सारे वन्धन—है अज्ञान !



दर्शन

आज मृदुल, सुरभित, शीतल समीर प्रवाहित है—
जिसका नूतन भाव, लय, धुन, नृत्य
प्रकृति के हृदय को स्पर्श करने में समर्थ है।
मानव के अतृप्त, सतप्त हृदय को सांत्वना—
आशा का संदेश देने, नभ में मेघ गर्जन है।
परन्तु उदारता, प्रसन्नता, तृप्ति के इस क्षण में
मैं उदास, विचारों की गहराई में डूब—
अपने में ही खो गया हूँ।
प्रकृति का स्पर्श, सृष्टि की तरंग,
मेरे मन को भी स्पर्श कर तरंगित करती है
परन्तु यह तरंग पुंज
उस महासागर में अजनबी की तरह विलीन हो जाता है—
जिसे तुमने अपनी महानता,
मेरी लघुता के बीचों बीच बना दिया है।
तुम्हारे विस्तार, विकीर्ण को निरन्तर प्रगति ने—
मेरी लघुता, अस्तित्व को मिटा दिया है। परन्तु मैं
स्वयं अपनी सत्ता, लघुता के अपमान से—
एक अंधेरे कोने में सकुचित हो गया हूँ
और तुम्हारी प्रगतिशील कर्म के प्रयत्न में की गई—
प्रत्येक चोट को प्रतिशोध, अहंकार की चोट समझता हूँ।
उदासीनता, निष्क्रियता के घेरे में—जीवन से दूर
स्वयं का भार हो गया लगता हूँ।
मेरी शक्ति का लक्ष्य भी लघुता का दर्शन ही क्यों ?
क्यों न हो यह लघुता में महानता का दर्शन
निर्माण का कारण, और सत्य की जय।

प्रात

यह पौ फटती प्रात,
मानवता का मनोहर नव-जीवन में मनोहार
जीवन की दिनचर्या, परिधि में धीरे उतरती
और नवीन के प्रति नित आग्रह
नदी और नाले, वन और खेत
मैं स्वयं ठहर कर भी—पार कर आगे निकल जाता हूँ।

लगता है मुझे कभी-कभी—जैसे स्वयं बहुत पहले समय से
बहुत आगे-जहां मंजिल भी ठोकरें से रुक गयी है—
आ गया हूँ—और ज्यों स्वयं भी धुंधला गया हूँ।
फिर भी कुछ है ऐसा, जो चलता है मुझ से भी आगे,
छाँटते हुए धुंधलका, बनते हुए जीवन-सूत्रधार
मैं युग-पुरुष स्वयं छांटा पट, प्रकृति की नियति बन जाता हूँ।

साथ के साथी, डूबे जीवन-रस में—
भौतिक आडम्बर के भुलाव में लिपट,
यथार्थ के नीरस सपनों में डूबते, उतराते—
अपने ही पग चिन्हों को रौंदते—
बनते जाते हैं पुरानी कहानी भरते जाते हैं
पुरातन—रिक्त होते जाते इतिहासिक स्थान।

अलगाव, सूनापन बनने लगते हैं—
नवीन जीवन, मृत्यु का माप दण्ड,
उठते हुए ऊपर-समाज, समय और काल से
और बचते हुए पुरातन और पुनरावृत्ति से
और दे जाते हैं अनूठा प्रभात-सन्देश।



अभिभावक

आज मेरे पाँव से टकरा कर कुछ टूट गया—
और उसकी झनझनाहट में
कुछ क्षण के लिए, उठता हुआ शोर दब गया है।
जाने क्या हर कदम इस बढ़ते, उठते हुए शोर की ओर चल पड़ते हैं
आने वाला के कदम शोर को बढ़ा रहे हैं,
संख्या बढ़ा रहे हैं,
और बढ़ता हुआ उत्साह और शोर बढ़ रहा है।
समाजवाद, समता के नारे—
आशा के साथ भूखे मरते को रोटी न दे सके।
सरकार, पुलिस, सेना—
पद-दलित, मानवता, शान्ति की रक्षा न कर सकी, क्योंकि
यह खरीदी हुई थी क्रूर, हिंसक, शोषक असामाजिक तत्व ने
और गिरवी थी इनके प्रतिनिधि राजनीतिज्ञ के पास।
और फिर अपनी अनबुझी भूख मिटाने के लिए भी तो-यह
शोषित व निबल का ही तो शोषण कर सकते हैं।

आज जब मैं राज्य, क्रम और कानून के रक्षक
इन अभिभावकों के दरवाजे पर शोर सुनकर—
देखने, जानने आगे बढ़ा
शीशे के दरवाजे के पीछे बैठे अभिभावकों—
की प्रतिक्रिया देखने को झुका तो
नीचे का शीशा ठोकर से टूट गया—और समूह ने
जनता ने चिटकनी खोल—उस जनता ने जिसका राज्य है,
राज्य और अधिकार स्वयं सम्भाल लिया।



देश भक्त को समय की पुकार

अपने जीवन को देश के लिए बलिदान, अर्पण किया तुमने—
देश की नीति, जनता तथा राज्य की सुरक्षा में लगे
लाखों, करोड़ों बेगुनाहों को युद्ध की ज्वाला में—
मृत्यु के मुँह में झोंक दिया।
प्यार, शान्ति तथा नैतिकता को तिलान्जलि दे दी—
परिवार का प्यार डिगा न सका तुम्हें पथ से,
देश के लिए, अपने पेट के लिए,
जो आवश्यक और सम्भव था सब किया तुमने।
इतिहास अपने देश का साक्षी है, तुम्हारे महान कर्म का
विपक्षी भूल न पायेगा—
तुम्हारा अमानवीय तथा क्रूर प्रहार, अत्याचार।
तुम्हारे कर्त्तव्य का पालन—तुम्हारे देश की नैतिक हार
उसका शक्ति पर विश्वास—शक्ति का प्रचार।
विज्ञान के युग में—
समाज तथा संस्कृति के पतन तथा संहार का लक्षण।
तुम्हें अपना कर्त्तव्य करना ही होगा,
विनाश करना ही होगा—अपने देश और समाज के लिए।
क्योंकि यह छोटा है, इसके लक्ष्य संकीर्ण हैं
भूगोल सिकुड़ कर छोटा रह गया है पृथ्वी पर।
तुम इसके रक्षक हो—गौरव और शक्ति के प्रतीक हो।
विपक्षी भी यही कहता है—अन्तर
प्रत्येक दूसरे का दोष देखता और कहता है।
वास्तव में तुम महान हो, और
तुम से भी महान है तुम्हारा कर्त्तव्य।



मानवीय अस्तित्व

विज्ञान की उपलब्धियाँ,
ज्ञान की गहरी सतह,
मनोवैज्ञानिक चमत्कार,
धर्म, दर्शन, अध्यात्म की प्रतिष्ठा
मानवीय अस्तित्व के हैं—प्रथम मोती।
मानसिक सत्ता का विस्तार,
श्रम-वहन की शारीरिक सामर्थ्य,
मानसिक साधना की प्रचुर मात्रा,
सामाजिक-वक्तव्य, सत्ता का अनुसन्धान,
राजनैतिक सत्ता का प्रभाव,
और हैं मानवीय अस्तित्व पूर्ण।



पत्थर

कितने गिन डाले पत्थर पथ के,
कितने पथ में पड़े उठा पत्थर मैंने—
बना पगडण्डी किनारों पर गाड़े हैं।
जो पूजा जाता है-वो भी पत्थर है,
है वो भी पत्थर-मानव जिससे टकराता है,
पत्थर जम बन जाते हैं शिखर,
पत्थर सज के बनते घर, मन्दिर,
हाथ का पत्थर-गिरे मन का निशान,
ज्ञान का हीरा-श्रम का वरदान।

मेरा देश

मेरे देश की डगर, आज सुनसान क्यो है ?
इसके भव्य भवन अधूरे—
नीव बन गई है कीचड
क्या मेरे देश मे सूर्य नही चमकेगा ? कभी नही तपेगा ?

जिसका भूत स्मरणीय, भविष्य निश्चित उज्जवल
उसका वर्तमान कब तक घोर अन्धकार मे रहेगा ?
यह देश बलिदान, सघर्ष का सपन है कब तक
देश-द्रोह, भ्रष्टाचार और असहाय परिस्थिति—
इसे काल के पास मे बान्धती रहेगी ?

मेरे देश मे कितने कमल खिल रहे है
नीति, ज्ञान, और विज्ञान के ,
देश-अरमान के मतवाले-
सघर्ष, बलिदान के लिये तक्ते, तपते !

देश पर मुझ से-आप से पहले अधिकार इनका है
हमे इनका आदर है—इनमे आस्था है ,
और है इनकी शक्ति का आभास ।



सोचो चाहे जो कुछ कहो वही जो तुम्हे कहना चाहिए !

फ्रांसीसी कहावत

आज शाम होगी सुनसान

चमकता सूर्य—
स्वच्छ, निर्मल नभ,
मादक शीतल समीर
पतझड की सूखी टहनियों पर—
निकलते नये पत्ते और पुष्प ।

चिडियों की चहक,
साईकिल की घंटी,
मोटर की गडगडाहट,
मशीनों की खामोशी,
श्रमिकों का आकांक्षा के समय पूर्ण-विराम ।

सजी चलती नव-वधु के सिर का भार
उसकी शरमीली मुस्कान,
बहकी बहकी चाल
आँखों में स्वपनिल भविष्य ,
पेट की जान, बन रही भू भार ।

सोचता मस्तिष्क, लिखते हाथ ,
बैठा शरीर, बाहर निकला पेट
मुँह की झुरियाँ, सिर के उडे बाल ,
चेहरे की उदासी—लगता
ज्यों आज शाम होगी सूनसान ।



आनन्द

प्रभु !
सत्य है—तुमने अपनी सृष्टि में मुझे
विशिष्ट स्थान पर अभिव्यक्त होने का अवसर दिया फिर
तुम्हारे कर्म, अभिव्यक्ति "मेरे" हैं—
इस बोध की क्या आवश्यकता थी !

तुम उस जन-समूह को सुरक्षित देखना चाहते हो—
जिसने सम्मोहन प्रभाव में
विश्व-नियम उल्लंघन कर—
मानवता, स्वतन्त्रता व सामाजिकता का अपमान किया है !

भू, स्वर्ग बने—तो
उनका कर्मफल इसी जीवन में मिलना आवश्यक है।
मैं अपने कर्मों पर लज्जित होकर—
क्षमा नहीं चाहता।
मेरी इतनी ही विनती है, मेरे कर्म
अभिव्यक्ति मेरे अपने रहें
और आत्म-विश्वास, आत्म-निर्भरता, स्वतन्त्रता का—
महानतम, उच्चतम आनन्द भोग सकूँ।

कमजोर होना दुखी होना है !

मिल्टन

लहर—
द्वेष, विषमता, कटुता की,
तनाव—
मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक,
जब मन की शान्ति मे बन्ध जाता है,
क्यो कभी कभी हवा के झोके हलचल करने लगते है ?

अपनी लगन, अपनी डगर
बढ़ते पथिक को—
क्यो पग पग पर मिटाने का प्रयास ?
चोट पर चोट, धैर्य की परीक्षा,
शारीरिक बन्धनो का शोषण
भक्षक-सहकारी समाज का नेता, न्याय रक्षक,
अपना है अपने रक्त का प्यासा—
बना हुआ शत्रु की कठपुतली, ढाल !

मानव तपने लगता है,
शुद्धता मे निखरने लगता है,
अपने को समझने लगता है, और
मानव से देवत्व कि ओर बढने लगता है।
समाज का यह बहुमूल्य प्रयास,
दुर्लभ व कठिन अन्वेषण,
वास्तव मे इसका, आने वाले युग का—
आधार है।



शक्ति का प्रयोग

आज मैं सोचने को विवश हूँ—
मेरी अनभिज्ञता, उदारता, सहृदयता से
अनुचित लाभ उठाया गया है!
मेरे सहयोग, मित्रता का परिणाम—
शत्रुता और कटुता और
मेरे विनाश का प्रयास!
आज जब नियति, कर्म और श्रम से—
आत्मनिर्भर और स्वतन्त्र हूँ,
सोचता हूँ—मेरा कर्तव्य इनके प्रति पुन उदार
अथवा तटस्थ होना है, अथवा इनका सुधार
जिसमे चाहे शक्ति का प्रयोग क्यो न हो!



निशा

निशा!
अन्धकार, विपदा, कष्टो-भरी—
ईश्वर सम्मुख सम्पूर्ण-समर्पण घडी
प्रतीक्षा, चिन्ताओ से दूर
चिर शान्ति की गोद,
मौन छटा के आवरण मे
नव-प्रभात का सुखद सदेश!
अन्धकार का परदा,
तन, मन, आत्मा का आश्रय
सकुचित को विकीर्ण, प्रसारण का अवसर,
अहं से दूर महत्ता, रक्षा का आभास।
नवीन वातावरण मे, नूतन सकल्प की पृष्ठ-भूमि—
निशा!

भक्ति

गीत-सम्मेलन और सुन्दर चित्रों में चित्रण हुआ आकृति का
तुम्हारी कृपा और महानता का
क्या इन सबने तुम्हें देख, पा लिया है ? नहीं—
इसे मनुष्य स्वयं जानता है, वह ईश्वर के कितना समीप है
हां ! कुछ अनभिज्ञ लोगों ने ईश्वर को अवश्य पा लिया है,
लगता है यह भक्ति नहीं, उनका प्यार था !

अथवा ईश्वर स्वयं, काम हित पृथ्वी पर उतर आया है,
और किया है मानवता को देव-समाज बनाने का निश्चय !
पापी ही अगले युग का देवता होगा,
क्योंकि उस युग में देवता और पापी का भेद न होगा,
निरूपण होगा स्वयं प्रभु के हाथ धरती पर,
क्योंकि ईश्वर, ईश्वर न रहकर मानव ही होगा !

भक्ति है मानवता की सेवा, और उससे प्यार
न कि परस्पर ताण्डव, युद्ध !



लक्ष्मी मुस्कराते हुए दरवाजे पर आती है।

—जापानी कहावत

अपने लक्ष्य को न भूलो, वरना जो कुछ मिल जायेगा उसी में सन्तोष मानने लगोगे।

—बर्नार्ड शा

वाणो

वाणी !
जीवन सन्देश तरग और है
मानस-पटल की भाव तरग की प्रस्फुरण ,
जीवन की भावनाओ की अभिव्यक्ति और आदान प्रदान,
शक्तिशाली मित्र, शत्रु उद्गम !

वाणी की महत्ता, सार्थकता ?
वाणी—सृष्टि-भेद, जीवन-सार
सफलता, असफलता रहस्य,
ज्ञान भडार, कारण, लक्ष्य , और
चिर-शान्ति का वास !

वाद्य की सगीत वाणी, शहनाई का गुजन स्वर
जडता मे मधुरता का वास
स्पन्दी, स्वतन्त्र, विचारशील मे ही क्यो—हिंसा, ध्वस
और प्रलय का प्रसार ,
क्यो स्पन्दन का स्पन्दन से विरोधाभास
स्पन्दन का स्वर, वाणी मे वैराग्य !
जीवन एक गीत-क्यो गीत का सगीत से वैमनस्य ?
राग की बेसुरी तान , ताल, स्वर का अमेल
अन्यथा दोनो है पूर्ण ।



लक्ष्मी साहसी को वरती है ।

—अज्ञात

एक अकेला

सूर्य निकला भी न था, नभ में मेघ छा गए ,
पगडंडी धूल और धूल से ढक गयी
पहले ही पग पर पाव में कांटे चुभ चले,
हमदम, हमसफ़र न हुआ, समय भी अपना न हुआ ,
मैं उदास न हुआ, और मंजिल की ओर बढ़ चला !

मैं निराश न हुआ नियति के सम्मुख,
सत्य, नियम अडिग रहा, संशय को स्थान न रहा ,
जीवन-मौन, शांति, निर्जन में परिपूर्ण
प्रसन्नचित्त पतझड़ बीता, बहार के द्वार पर आ पहुँचा !

कर्म से उदासीन ? निष्क्रियता, मृत्यु का द्वार भी
कर्म की महत्ता का ज्ञान है
अकेला हूँ, एक अकेला चला ,
ईश्वर के साथ भी हम अकेले हैं,
ईश्वर एक है, उपलब्धि भी एक ही है,
और है मानवता एक।



जिस क्षण तुम सिवाय ईश्वर के किसी का भरोसा नहीं रखो, उसी वक्त शक्तिमान् बन जाते हो, और तमाम निराशा गायब हो जाती है।

—गांधी



ईश्वर मर चुका है उठो भाग्य बदलो

ईश्वर मर चुका है,
भूखा लड चुका है ,
निबल स्वयं मिटता है ,
उठो ! भाग्य बदलो, समय ढलता है !

झूठ के अपने पाँव नही,
अन्याय, अत्याचार का आधार नही,
घृणा को यहा स्थान नही,
उठो ! समाज बदलो, समाजवाद मिटता है।

देखना ! नेता यथार्थवादी हो,
देश, मानवता का रक्षक हो,
चुनाव निष्पक्ष, सस्ता हो,
रोको भ्रष्टाचार, लोकतन्त्र कलकित होता है ।

देखना ! सब मनुज समान हो,
शिक्षित , उचित उपचार हो,
खाना, वस्त्र और घर हो,
रोको विनाश, अन्यथा, क्रान्तिनाद होता है।

मृत्यु को जीत लो,
दैवी सत्ता को दो चुनौती,
प्रकृति सम्मोहन तोड दो,
तोडो बेडियाँ, जन जन स्वतन्त्रता घोषित करता है ।



पुष्प

प्रकृति की रूप चितवन शीतल समीर सग तुम झूम रहे
मन मोहे कोमल पंखुरीया, हरियाल डाल, मृदुल सुरभि छोड रहे है
रग अनेक अनूठे, पंखुरीया अद्भुत, छोटे बडे झूम रहे
मोती बनी ओस बूद, तितलिया चित्रित, भौरे अनेक गूज रहे।
पानी वही, मिट्टी वही, माली एक, न जननी अनेक
औ रग उपासक नूतन मुस्कान लिए, जानते न जीवन दिवस अनेक।
माली के उद्गार लिए, प्रफुल्लित हँस आलिगन मृत्यु मानव हाथ करे
जीवन धर्म उपकार लिए, सुगंधित कर, मध्या झुक मिट्टी माथ धरे।
देव मन्दिर हो, बाला हो, या माला मे तुमको गूँथे कोई
अनजाना हो, जीवन-दाता माली हो, या वढ शिशु अ ग गहे कोई।
धाम न अपना कोई, भाव न अपना कोई, अश्रु हुआ न अपना
तुम सुन्दर, लघु जीवन सुन्दर, मृत्यु अती सुदर, शोक हुआ न अपना
जीवन के अंतिम क्षण, तुम ही प्रसन्न, मिल निज जन जो प्रेम विदा कहे
सगी, सखा न शोक विह्वल कोई, ज्यो घर आगन झूम रहे!
दिनकर तापे, नीलाम्वर पीछे झाके, या नीर भरी वदली ऊपर छा जाये
इच्छा न अपनी कोई, न भय, चाहे मृत्यु आंधी घिर आये।
तोडे या कुचल अपमान करे, वरदान, दानी सुगंधि देते हो
फेंके, रखे पूजे या स्नान हो, तुम सदैव प्रेम भावना देते हो।
चूमे, गाल छुवाये, वस्त्र टाके, या घर आगन मे सज रहे
तुम न भूले मर्यादा अपनी, होठ चन सुदर गीत रहे।
समाधियाँ ये स्वतन्त्रता प्रेमी नेता, सत, देश-भक्त नातेदारो की
गौरवशाली, सम्मानित, भावना स्रोत, औ प्रतिनिधि मानव अभिव्यक्ति
तू मम चित सैंया पूजा शृ गार, या आदर-भाव गल माल पडे
अ शमात्र मन तेरा मैं पाता, जन शान्ति,
प्रेम निमित्त अनन्त उद्गार निकल पडे।
जग उपवन हो गये, नेह नद वहे, न युद्ध के बादल यो छा रहे
घृणा, द्वेष न जन्मे, न भय जन मन छुवे स्वर्ग यह भू बन रहे।

निराशा से आशा की ओर

हर्षित रहने वाले मन मेरे, डग मग क्यो निराशा मे करता
दुख-सुख सग चले समय के भाग्य किसी का एक न रहता ।

बहार
सुदर सुदर सपन सजोये, गीत मल्हार गाये तूने
अनगिनत, आशाओ के उपवन मे खेल किये तूने
बैठ न हार किनारे, छोड निराशा, आशा पथ पर चलता जा ।
हर्षित रहने वाले मन मेरे डगमग क्यो निराशा मे करता ।

यहाँ किसका बैर, विरोध नही कौन यहा अतृप्त नही
नित युद्ध के बादल गरजते , निज जन का अपना विश्वास नही
ठहर न देख लपट ज्वाला अच्छा होता भू स्वग,शान्ति धाम बनाना
हर्षित रहने वाले मन मेरे, डगमग क्यो निराशा मे करता ।

गिरजे, मन्दिर, मसजिद गुरुद्वारो म , धम के ठेकेदारो मे
एकता, शान्ति, सत्य, अहिंसा, ज्ञान के शत्रु समाज के ठेकेदारो मे
मिट्टी रुलती दम तोडते मनुज की , नैतिक अवलम्बन क्या करना ।
हर्षित रहने वाले मन मेरे, डग मग क्यो निराशा मे करता ।

सचय कर शक्ति, जन समूह, युग खडा आश लगाये द्वार तेरे
तज सकुचित सम हित, मानवता, नवयुग आचल पसार खडा द्वार तेरे
तू चाल न चूक अपनो , न्याय, सत्य हित फल रहित कम करता जा ।
हर्षित रहने वाले मन मेरे डग मगा क्यो निराशा मे करता ।

प्रफुल्लित मन पग पग डग भरा , लक्ष्य स्वयं तुझे [illegible] ार रहा
भर आत्मविश्वास, ले शक्ति का अवलम्ब [illegible] धार
यह धम क्षण, रक्षण, जय लक्षण, दुजन,दलि [illegible] कर
हर्षित रहने वाले मन मेरे, डगमग क्यो [illegible]

कौन आया मेरे मन के द्वारे

कौन आया मेरे मन के द्वारे, नूतन जीवन आश लिए।
जगमाया मे खोया, थका, हारा, आशा नित-निर्माण लिए
मृत्यु पा रोती, शत्रु हँस-रोता जन निज-हाथ धन खोए।
अत्याचार, पाप, द्वेष लिए, हिंसा का कर अवलम्बन।
पवित्र-शक्ति निरीह जन समूह पाप लगा, धन बैठी भगवान।
कौन इस पथ गहन तम म, हाथ पर-हित प्रकाश लिए
कौन आया मेरे मन के द्वारे, नूतन जीवन आश लिए।

मैं भूला, जगत कल्पना मे खोया, अनजान मन्दमत पड सोया
अपने, पराये अतीत मे डूबा, आँखे खुली, भोर हुई मन रोया।
ससार सोये मुझको जगने दे, उठ, चल कर्म करने दे।
जग रोता अश्रु पीने दे, दुख विपदा मे उन्मत्त हँसने दे।
कौन जडता मोती, टूटे मन आँगन, नवीन प्रेम उत्साह लिए
कौन आया मेरे मन के द्वारे, नूतन जीवन आश लिए।

बन्धु, मित्र, सखा, जग खोया, मनमानी धन, दौलत, वैभव खोया
ईश्वर, दुबल, दलित सेवा-रत, यह जीवन, वह लोक बिगाड लिया।
देश सेवा क्रूर बना, समाज सेवा विद्रोही, जन सेवा अछूत हुआ
जग कहता मैं कौन कहा से कैसे, विभाजित भू पर चला आया।
कौन अनन्त शाश्वत शून्य मे, गाता गीत नवयुग सदेश लिए,
कौन आया मेरे मन के द्वारे, नूतन जीवन आश लिए।

पथ भटका, दिल डूबा जाता, यम रहता सदैव द्वार
आशाये टूटी, ठोकर खाता, पग पग आता तेरे द्वार।
निष्ठुर की चोट आवाज रहित अतर मे, वश किसका चलता
तू ही वह जिसको पूजे जग, विद्रोह, क्रान्ति स्वर किसका उठता।
कौन सीमा बन्धन तोड, पकडता हाथ, नूतन सजन शृंगार लिए
कौन आया मेरे मन के द्वारे, नूतन जीवन आश लिए।

प्रसन्न चित गाऊँ गीत तेरे

जन्म, जीवन दाता आभारी , प्रसन्नचित गाऊँ गीत तेरे
सुंदर तन, मन, चित आभारी, आत्म-सत्य धुन तेरे ।
भरपूर घर परिवार , अनेक प्रिय कुटुम्बी नातेदार
अद्भुत आत्म विश्वास, अनूठा दृढ संकल्प , पाया वरदान ।
पग पग चूमे सफलता , मानस कल्पना तीव्र ज्ञान-प्रकाश
जीवन रक्षक नीति रक्षक आभारी , प्रफुल्लित गुणगान करूँ तेरे ।

निराशा, असफलता, सन्देह , कृपा होवे घर घर हटते है
पापी, दोषी सन्त बने , प्रिय, जन जन, भूले सम्भलते है ।
जीवन स्वामी , मृत्यु द्वार हम भय, चिन्ता रहित रहते है
विपदा में मुस्काते, जग-संगीत लहरिया मे डूबे मनुज तेरे ।

युद्ध, कलह न भाये तुमको, हमको , अपराधी छुन रहे
वैर, विरोध रक्तपात न भाये तुमको, हमको, शान्ति बनी रहे ।
स्वर्ग बनी धरा, मानव देव शक्ति निमित्त बन रहे
मानव करता स्वर्ग निर्माण, दया, प्रेम, सुख अधिकार हुए ।

सोचता बार बार तोडने को अनंत, शाश्वत घेरा
कहते संसार सत्य, बन्धन-रहित ' घेरा मन अज्ञान का डेरा ।
मृत्यु संग जूझने की सोचता , कहते जीवन अनन्त अमर मेरा
मिला विशिष्ट, दुर्लभ प्रेम, दर्शन आभारी, स्मरण करूँ भोर सवेरे

धन, वैभव, मित्र, गीत और चित्र मेरे , सत्य सब तेरे
उच्छ्वास, तरंग, मन उद्गार, उमंग मेरे , सत्य रूप तेरे ।
यह लेखनी, तूलिका, विद्या, जग व्यापार , सत्य निधि तेरे
मैं मुक्त, अभिव्यक्त, कर्तव्य-निष्ठ , झूमता स्वर बासुरी तेरे

चुनौती

भगवान तुम हो करुणानिधि , कृपा सदैव तुम्हारी बनी रहे
शक्तिरूप तुम हो ज्ञानमय , विफलता मेरी बनी रहे ।
महाभाग्य हमारे , तुम देव मानव-धाम दियो
कर्मफल बन्धन से मुक्त कियो , मोहे दुर्लभ आत्मज्ञान भयो ।
योगी, दानी, पण्डित लालसा करत , दर्श वह सम्मुख बना रहे
जे जग मांगत सो दूर रहे , पास निधि तुम्हारी बनी रहे ।

अविश्वास, दोष भरे हो तन, मन मे , लखो प्रेम, गुण मेरे
पग पग भटकूँ, ठोकर खाऊँ , दृष्टि से दूर न हो मेरे ।
रोऊँ, कलपूँ, आहें भर लूँ , दुर्वचन न निकले मुँह कोई
अपमान, क्रोध से सन्तप्त हो , क्रूर कर्म हाथ न हो कोई ।
निराशा, चिन्ता, चाहे विपदा भारी हो, मुस्कान मुख बनी रहे ।

जब चोट लगे , और असफलता दर दर मिलती हो
निज जन दूर भगे , और विरोधी पग पग बढते हो ।
शरीर चले न संग अपने , और मन, तम भर जाये
प्रीत की रीत न छलके , और जन जन बैरी हो जाये ।
मृत्यु झूमे, सुख खोजे ना , प्रिय एक साथ तुम्हारा बना रहे ।

अपशब्द कहे कोई, या घातक वार करे , दर्श तुम्हारे हो सखे
निन्दा करे कोई, या षडयन्त्रकार बने , मुक्त, शान्त रहूँ सखे ।
औरन का पास न हो, छिन अपना सब जाये, हाथ कभी न यह फैले
तन उघडा हो, पेट न रोटी हो, अन्यायी सम्मुख हाथ न यह फैले ।
हृदय तृप्त, मानस चित्त, सुन्दर , सत्य, न्याय धुन जगी रहे ।

भक्त उठ, चल, रहा यहाँ भगवान नहीं

भक्त उठ, चल, रहा यहाँ भगवान नहीं
कर्मभूमि बन मन्दिर रहा भगवान नहीं।

अन्धकार से प्रकाश की ओर
असत्य से सत्य, प्रेम द्वार की ओर
मृत्यु विनाश से जीवन की ओर
जन उठ चल रहा यहाँ विश्रान्त नहीं।

शोषित, दासता से स्वतन्त्रता की ओर
संशय, भय द्वेष से निर्भयता की ओर
अन्याय, भेद से समानता, न्याय की ओर
आत्मशक्ति जग, रहा यहाँ विश्राम नहीं।

अज्ञान, अन्धविश्वास से विज्ञान, ज्ञान की ओर
विस्मृति, पुरातन से नूतन, आगे की ओर
यत्न, तप से समाज, मानव सेवा की ओर
प्रगति की आशा, नवनिर्माण, रहा यहाँ सपन नहीं।

अपवित्रता से निर्मलता, सरलता की ओर
नीति से परहित, रहस्यहीनता की ओर
निद्रा, अकर्मण्यता, दीर्घ-सुप्तता से जागरण की ओर
नूतन संसार खिलो, रहा यहाँ युग पुरातन नहीं।

जागृति, संस्कृति, पूर्व-पश्चिम संगम की ओर
देश, काल चक्र, प्रलय से स्थिरता की ओर
देश मानव, युग-मानव, सुरक्षा की ओर
समय उठ, अब रहा यहाँ अनन्त नहीं।

प्रसन्न हो कृपा, दया दान न देना मुझको, शक्ति रखना पास सखे
दुर्दिन,जगहित जिसार सम्मान न देना मुझको, भावन रखना पास सखे।
डगर है मेरी अपनी, जन्म हो बार बार, मुक्ति रखना पास सखे
भू स्वर्ग स्थल अपना, सत्य ए मृष्टि मारी, ब्रह्मलोक रखना पास सखे।
विनती अपनी इतनी, बस महाभाव भरपूर रहे, न देवलोक चाह रहे।

तुम सखा जन्म जन्म के, प्रीत यह युग युग बनी रहे
शरीर है अपना निगुण हो तुम , जोडी युग युग बनी रहे।
मानव शरीर एक हो , भेद रेख न यह बनी रह
जन जन देव हो , आसुरी भेद रेख न खिंची रहे।
मृत्यु लोक बना रहे, निर्वाण न पूर्ण हो, सत्य,शान्ति सेवा बनी रह।

राह हो अपनी टेढी, मेढी दुगम , और हो खड से भरपूर
सकट हो, प्रलोभन हो , और हो भय से भरपूर।
असफलता ही सफलता हो , दुख ही सुख मे ढलता हो
कदम न रुकने पाये, होट लगी रहे , जग-कम न सपना हो।
मन मेरा अपना हो, नियति, दैव अपना,स्वतन्त्रता सदै बनी रह।

बार बार मरूँ जगहित , जन्म हो बार बार माँ निमित्त
सम, स्थिर हो मन मेरा , कर्म हो बार बार मानवता हित।
प्राथना अपनी तुम से , ये देव-समाज, जगती बनी रहे
कहीं न हो ऐसा, प्रलयकाल हम ही सम्मुख ठन रह।
भावना जद यह भये , हृदय तुमरे चुनौती अपनी बनी रहे।



स्वतन्त्र कौन है? ज्ञानी जो कि अपनी वेदनाओं पर शासन कर सकता है , जिसे अभाव, मौत या जजीरो का डर नही, जो अपनी इच्छाओ का दृढता पूवक निरोध करता है और लोक प्रतिष्ठा से घृणा करता है, जो पूर्णतया स्वयं पर निभर रहता है , जिसका स्वभाव सौम्य और शान्त बन गया है।

होरेस

भक्त उठ, चल, रहा यहाँ भगवान नहीं

भक्त उठ चल रहा यहाँ भगवान नहीं
कर्मभूमि बन मन्दिर रहा भगवान नहीं।

अन्धकार से प्रकाश की ओर
असत्य से सत्य प्रेम त्याग की ओर
मृत्यु विनाश से जीवन की ओर
जन उठ चल रहा यहाँ विश्रान्त नहीं।

रक्षित, दासता से स्वतन्त्रता की ओर
संशय, भय, द्वेष से निर्भयता की ओर
अन्याय, भेद से समानता, न्याय की ओर
आत्मशक्ति जग, रहा यहाँ विश्राम नहीं।

अज्ञान, अन्धविश्वास से विज्ञान, ज्ञान की ओर
विस्मृति पुरातन से नूतन, आगे की ओर
धन, तप से समाज, मानव सेवा की ओर
प्रकृति की आशा, नवनिर्माण, रहा यहाँ सपन नहीं।

अपवित्रता से निर्मलता, सरलता की ओर
नीति से परहित, रहस्यहीनता की ओर
निद्रा, अकर्मण्यता, दीर्घ-सूत्रता से जागरण की ओर
नूतन संकल्प खिलो, रहा यहाँ युग पुरातन नहीं।

जागृति, संस्कृति, पूर्व-पश्चिम संगम की ओर
दण्ड, काल चक्र, प्रलय से स्थिरता की ओर
देश मानव, युग-मानव, सुरक्षा की ओर
समय उठ, अब रहा यहाँ श्रान्त नहीं।

हिंसा, प्रतिशोध से अहिंसा, क्षमा की ओर
युद्ध, विभाजन से संगठन, सहयोग की ओर
पृथ्वी, ग्रह, उपग्रह मे विशालता की ओर
ज्ञान विस्तृत हो, अब रहा यहां बंधन नहीं।



तुम बहुत याद आये

तुम बहुत याद आये—भूला न सके हम,
राते हो, दिन हो—सुबह हो, हो शामे।

दु खो मे भी तुम थे—सुखो मे उदासी,
खुशियो के आंसू—दु खो मे मोती।
हमारी वफायें, तुम्हारी जफायें—हुए वायदे,
विपदा की वर्षा—छाई गम की घटायें।

कठोर मुड कर न देखा, एक बार हम को,
खडे राहो मे, समझा न एक बार हम को।
तुम न बोले, हम भी चुप है—हैं घबराये,
पराये तुम्हारे, हम हुए बेगाने, पराये।

आखो की बेवफाई, दिल की बेपर्दगी,
ढहती इन्सानियत—बोझ से दबी नेकी, सच्चाई।
जमते हुए सास, दम तोडती कम की दुहाई,
मुझे पुकारते क्यो-सुबह मे शमां के परवाने।



गीत

गीत नही वह भाव औरो के भर, शक्ति विरोध सम्मुख झुक जाय !
मानव क्या वह भगवान विस्मृति मे, योग भयभीत पथ रुक जाये !!
प्रेमी नही वह शत्रु को शत्रु समझ, प्रतिशोध भावना मन ले आये !
सत्य रक्षक कैसे अपना लाभ, कष्ट लख, मानवता हित भूल जाये !!

जीवन वह क्या जीवन जो अन्त समय मिट्टी मिल जाये !
यौवन नही वह यौवन जो भय, सकट पथ अपने हट जाये !!
सुन्दर, सुवासित कब जो समय थपेडे खा, असुन्दर, दुर्गन्ध बने !
प्रगति, परिवतन वह पूणता पा, अन्तिम छोर छू पाये !!

प्रलय वह प्रलय शून्य मे प्रकृति, सृष्टिकर्त्ता स्वयं समा जाये !
विधाता, दाता वह कैसा चुप अ त समय, मृत्यु झूमे, छिन सब जाये !!
स्वतन्त्रता नही वह स्वतन्त्रता जो समय, कालपाश बधी हो !
रक्षा, सेवा क्या वह जो आकाक्षा, यश नीव टिकी हो !!

निर्भय वह भय, त्रास मे सिद्धा त पथ चले जाये !
पौरुष वह विकट सकट, सहार कारा, आशा उर ले आये !!
जन वह सत्य न्याय हेतु , ईश्वर मे भी ठन जाये !
विश्वास वह अविश्वास, धोखे मे करुणा, क्षमा भूल न पाये !!

सगीत वह गायक सम्मुख झूक, श्रोतागण मन छू जाये !
लक्ष्य वह समय, युग परिवतन, स्थिर सम्मानित रह पाये !!
भेद वह जिह्वा अपनी, दीवार कान, कान, सुन न पाये !
सेवा वह फल, प्रशसा रहित, जन-जीवन म उतर आये !!

सत्ता वह मनुज को सम्पन्न, प्रसन्न, उदार बनाये।
शक्ति वह धरा पर अवतरित हो स्वर्ग बनाये।।
प्रकाश वह मन तम में भी, आलोक किरण बन पाये।
पूजा, भक्ति वह मानव, मानवता को पूर्ण बनाए।।

धन, सम्पद वह श्रम, जग, जन, सेवा काम लग जाये।
चोट वह भाव भीनी, तन तज, अंतर में लग जाये।।



यादें

तुम बिछुड़े जब से, दिल ने कितनी बार पुकारा है,
तुम न समझे मन बीती, हम ने कैसे वक्त गुजारा है।

यों तो बहारें आई हैं, आती हैं,
छोर किसी, घनघोर घटायें होती हैं।

बहलता भी है मन, तो तेरी ही यादों की छाया में,
रहते हैं जो, होते हैं जो—
मिलने की आशाओं में बंधे तो होते हैं
तुम तो मिले भी यों—
शक होता है होने, मिलने का जग वालों को।
मानें कैसे जग की,
झुठलायें कैसे अपना विश्वास?

कोहरे की चढ़ती परतें, समय का बढ़ता बोझ
ढाता जाता है कुछ कुछ—बढ़ता कामना।



समय

दुख-सुख, जन्म-मरण, समय का चक्र चलता है
बचपन खेला, बीता यौवन, तन, जीवन बुढापे ढलता है।

उत्थान, पतन होवे, और भवन खंडहर बन जाए
राजा रंक बने, और निबल बली बन जाए
रजनी-शशि भोर ढले, और उषा संध्या बन रहे
जग-उत्पति प्रलय बने जीवन मृत्यु संग झूझ रहे।
मन, कर्म अपना, यह समय न अपना होता है
प्रकृति सम्बन्ध अपना, सृष्टि चक्र न अपना होता है।

सर्दी, गर्मी, वर्षा, बसन्त, पतझड़ आते जाते है
द्वापर, त्रेता, सतयुग, कलियुग, युग युग बीते जाते हैं
हठ, राज, भक्ति, ज्ञान, कर्म-योग, नियोग स्थित विज्ञान हुआ
असुर, गन्धर्व, देव, मानव, अतिमानव स्थित-प्रज्ञ हुआ।
योग प्रयोग बने, मूढ़ ज्ञानी बनता जाता है
ईश्वर बने सखा, मूर्ख वैज्ञानिक बनता जाता है।

भरपूर रिक्त हुआ, पर्वत भू अर्पित, जल थल बन जाये
सभ्यता, संस्कृति मिटे, सत्ता डोले, भाव, रूप नये भर लाये
सिद्धान्त, नैतिक-स्तर, मनुष्य-आस्था, टूटे, बदले, फिर बन जाये
रोगी स्वस्थ बने, जीवित मृत, कर्म, कर्मफल, निशि, दिन बदल गये
मित्र, शत्रु, बने शत्रु मित्र, अपना प्रिय भूला जाता है
पापी सन्त बने, कटु प्रिय, यों ही जीवन बीता जाता है।

पूजित, मर्यादित अपमानित हो, आत्म गौरव टूट रहे
अपमानित रूप, ढले सुन्दरता, आत्मविश्वास डोल रहे
सुन्दर जीवन-चित्र विनाश चित्रण, तूली एक करे
सुव्यवस्थित मानव बस्ती, धरती डोले, उजाड़ भूकम्प एक करे।
जाति भेद, वर्ण भेद, रंग भेद, मानव समाज संग चलता है
राम, कृष्ण, रहीम, अल्लाह, खिस्त, ताओ भेद, धरा पर पलता है।

युगोदय

लो प्रभात की वेला मे नव-युगोदय हुआ ,
दुख , महार के रजनी तम मे, प्रादु भाव प्रवाश हुआ ।
स्मरण हमे धम-युद्ध, हुई लाल रक्त-रजित भूमि यह
अ धविश्वास, जाँत-पाँत, पूजित, पण्डित, योगी, त त्र रजित धरणी यह।
रग-भेद, ऊँच नीच, निर्बल-बली, धनिक-रक
पाप-पुण्य, देश-विदेश मे विभाजित मानवता जगती मे ।
बज उठा विगुल, एकता, शान्ति और सस्कृति उत्थान का
एक मानव, एक ईश्वर, एक नीति , एक सत्ता ज्ञान का ।
युद्ध की भीपणता, विज्ञान के चमत्कार, अतिमानसिक सत्ता का
ग्रह यातायात, लोकतन्त्र, मानव अधिकार, स्वतन्त्रता का ।
समझते ह ईश्वरीय दैवी-शक्ति, राज्य सत्ता को
प्रकृति शक्ति-स्रोत, जीवन, मृत्यु और समय को ।
देश, विदेश के इतिहास, भौगोलिक, राजनीतिक स्थिति को
मानव, समाज, एकता के प्रभाव, और निज कर्तव्य को ।
निकल पडे ह अ न्त पथ पर, अपने गन्तव्य की ओर
दृढ सकल्प, निभय, निर्विकार, नवीन-समाज सस्थापन की ओर ।
जीवन दीघता, मानवीय समानता, स्वतन्त्रता की ओर
मानव के शक्तिशाली, ऐश्वयवान, वैभवशाली, देव बनने की ओर।
जन-जन के हृदय मे देश सेवा, मानवता सेवा है
धम सत्य, शान्ति, एक मानवता, और मनुष्य की प्रगति है।
अहकार खोखला, स्वाभीमान का अपना स्थान है
अहो भाग्य सभ्यता, नवयुग, समय के युग मानव हुआ है।
सम्भावना को पख लगे, आशा, ऊषा मधुर मिलन हुआ है ।
लो प्रभात की वेला मे नव-युगोदय हुआ है ।



प्रभात गीत

चुप रजनी तम घोर घना, होगा कब सुखद प्रभात
मन विक्षिप्त, गज तूफान चला, होगा कब मगल प्रभात !
मानवता आहत, सहारक विज्ञान, क्यो उदय न होगा ज्ञान ?
युद्ध, भय, अशान्त तन, मन, जन, क्यो न गूजे प्रेम, अहिंसा गान।
पसीने हुआ थका श्रमिक, मिट्टी लथपथ है जन किसान
पेट पकडे रक्त-रजित सिपाही, गाल आख, पेट धँसा निधन !
शरीर-बलवान, पानी हुआ रक्त, फिर क्यो न हो क्रान्तिनाद
निर्दोष पापी हुआ, ठगा जन जाता, क्यो न हो जीवन प्रभात !
निर्बल, दुखी नरक फँसा, कपट पग-पग मिलता है,
अविश्वास, असन्तोष बीच फँसा, दूर जन जन हटता जाता है !
हर आशा निराशा बनी, यौवन, खुशीयाँ ढल चली
धम कलह-घर बना, सुन्दर हित बात अहित बनी !
सम्बन्ध, बधन पुरातन सब टूटे, ढल शशि तेज चला
मानव एकाकी, विलग समूह हुए, ढल रवि तेज चला !
देख रहा काले नभ मे उठ उठ, कोई भोर का तारा
गीत सुनसान विराने मे, कोई गाता वैभव अतीत का !
नवयुग की देहली पर, बजी सगीत धुन कोई आशा की
स्वतन्त्रता, समता की, ईश्वर सृष्टि अवतरण की !
प्रभात न अपना वो प्रभात, जिसमे छोर दूसरे सध्या छा जाये
भगवान न अपना वो भगवान, जिसकी शक्ति पण्डित, साधक साथ !
अन्धविश्वास खण्डित हुए, ज्योति जगी जन मन मे
पाखण्ड धूल-धर्षित हुए, भू-ध्वज गडी चन्द्र-स्थल मे !
चमत्कार, दश हुँये सदियो के, साक्षात्कार अब नित होता
शक्ति अवतरित सदियो से, साक्षात्कार अब नित होता !
परिवतन नही अपना वह परिवतन, जो टिका हो सहार ध्वस
तुच्छ हित, बल अहकार तज, मानव हो मानव के साथ !

श्रमिक

हम रोटी के उपासक, कमठ श्रमिक
हम जीवन, निर्माण-स्तम्भ, जग-रक्षक !

न्याय-आधार, कर्म उपासक, प्रभु गुण गायक
तन उघडा, पेट खाली, शान्ति, प्रेम साधक !
शोषित, दलित, दम तोडने अधखिले जन-सुमन
प्रतिष्ठा, रक्षा रहित उपेक्षा, प्रतीक्षा, तिरस्कार मन।
यह जनतन्त्र, समाजवाद, कर्म, श्रम, प्रतिष्ठा रूपक
हम रोटी के उपासक, कमठ श्रमिक !

नैतिक, समाज बन्धन, प्रकृति, ईश्वर जिनका प्रगति द्वार
जन मन मीत, जलती बालू दौडते नगे पाँव, शरीर जाने कौन प्रीत।
कमठ प्रकृति उपासक, पी खट्टी छाछ, खाता ठण्डी, बासी रोटी
तपती धरती, झुलसती लू, चलता उसका निद्वन्द्व कर्म गीत !
जीवन ज्योति, देश भक्त रक्त, सभ्यता नियन्तक
हम रोटी के उपासक, कमठ श्रमिक !

अधिकार भूले, जकडे दास, ज्ञानहीन अछूत
प्रेम-विभोर, पर दुःख कातर, भविष्य आस्था अटूट !
श्रम बिन्दु माथ, शरीर श्रम हाथ, निश्चित वर्तमान भूले भूत
नवयुग निर्माता जग जीवन दाता, विधाता, माँ सपूत !
क्रान्ति, युग, धर्म, प्रवर्तक, करते जन्म सार्थक
हम रोटी के उपासक, कमठ श्रमिक !



मेरे मित्र, कृत्यो से मुझे धन्यवाद दो, शब्दो मे नही !
—कोनर

कोई हमराह न मिला

मुझे कोई हमराह् न मिला,
पूछे दिन मेरा क्यों न मिला ?

हमराज बनाये कितने ही अनजाने,
कुछ सदमे, कुछ घाव पडे खाने !

हमने तुम्हे प्यार दिया अपना,
कब तुम से हम ने कुछ चाहा !

हम तो यो ही राह चलते जाते थे,
हमने तो साथी बनना चाहा था !

मेरे मन के तुम, हुए बेगानो के,
दिल ही तो है, पत्थर न बना जो !

भूलाने को बहुत है पास मेरे,
जो अपनो को मिटाने पर मै आता !

याद तुम आते हो हर घडी, पल,
सोचते है तुम पर क्या गुजरती होगी !

मेरी जफाये तुम्हारी बेवफाई का सिलसिला बना,
पूछे दिल मेरा, हम क्या अपना समझ बैठे !

जमाने की कितनी ठोकरे हमने सही,
मुस्कराते मजिल पर बढते ही रहे हम !

हमे मालूम न था दीवानगी मे अपनी,
अपनी मजिल को रुस्वा किए जाते है !

तुम्हे डर है जमाने का, अपनी तकदीर का,
बन हो, बनना था औरो का–हमे क्यो अपनाया !

मुझे कोई हमराह न मिला,
पूछे दिल मेरा क्यो न मिला !



आँधी

आज आँधी चली है, तम घना, उजड ये बस्ती चली है
सरसराती हवा चली है, दम घुटता, बदबू से भर चली है ।
कभी खुदा की ईबादत यहाँ हुआ करती थी,
मागते दुआ औरों को, यहाँ नूर बरसती थी ।
ईश्वर को भी किसी पुजारी ने पूजा था
वैभव छोड, मागा था शक्ति, प्रेम वरदान ।
आज इसान तो क्या, इमारत ही खडहर बन चली है ।
कोई रिश्ता, नाता नही, धम भी उसका कुछ और ही था
भूखा, प्यासा, बेजान घायल पडा, रग भी कुछ और ही था ।
बढ के गले लगाया किसी ने, बुमा हजारो के सामने
तोड दास्ता-बेडी' अधिकार, समानता दी हजारो के सामने ।
आग लगी आज कही फिर, रक्त रक्त को भूला,
मानवता पशु राह बढ चली है ।
बादल युद्ध, भय छाये, न्याय, शक्ति, प्रेम ग्रह धरोहर है
क्यो ईश्वर, सृष्टि, निर्माण से ध्वस, प्रलय ओर बढी है ।
भूखे ने भगवान से, काले ने गोरे के विरुद्ध न्याय मागा
जापान के युद्ध-कालीन निरीह जन समूह ने भी पुकारा ।
विज्ञान को और सहारक अस्त्र शस्त्र बनाने दो, होड लगी है ।
नेताओ को भाया, देश और रक्षा के नाम पर
मानवीय जनता मे फूट डाल कर लूट लेने दो ।
प्रलय की दण्ड घडी से, शुद्ध आत्म होकर, पर हित—
शान्ति पथ पर चलने को कहा है जरा सोच लेने दो ।
आज मुझे भी फिर सोच लेने दो,
दैव, समय की सूई गन्तव्य की ओर चली है ।



विरह

आश लिए प्यार भरे दिल को चरणो मे रखने आई थी,
रूप, गुण, श्रृंगार सदी—घर छोड सग चली आई थी !

पालनहार ने तोड चूडियाँ—पोछ माथे का सिन्दूर दिया,
जीवन-सपने ले मेरे-तडफ, विछोह आचल भर दिया !

पूछे मोह, ममता की मारी-कहती तज मोह दिया,
समझे कौन मन की मोरी घुटते, पल-पल कटती रतिया !

मैं भोली जानूँ ना, मन की मानूँ ना-आहे भरती हूँ
बदलते रात दिन, साँझ सवेरे-ढलती जवानी लखती हूँ !

तडफे मनवा, जलता जियरा-सजन ढूँढा घर और,
मैं प्यासी, रोती अँखियां पग थके खोज चहुँ ओर !



ताज

शाहजहाँ का प्यार, मुमताज की याद
ताज तू मानव प्रेम का निमल कान्तिमय मोती !

बहती सरित् निकट तेरे, नित जीवन राग लिये
महाकाल चूप, उर आशा चिर-मिलन लिये !
वैभव, स्मृति-स्मारक, अद्भुत चित्रित कलाकृति
निधन जन का उपहास, मुगल इतिहास प्रहरी !
रजनी झूमे, अश्रु बरसे, शरत् पूर्णिमा तेरा यौवन
जन मन की कल्पना, अनूठा रूप, कला सगम !

श्वेत वर्ण रंग लिये, जन जन, जग तेरा प्रशंसक
निर्धन के सबल हाथों की जय, भारत का गौरव !
शाहजहाँ का प्यार, मुमताज की याद
ताज तू मानव प्रेम का निर्मल कान्तिमय मोती !
चुप, शान्त तू याद विरह की दिला घबराता
समय उपहार, तू ममय पुरातन मानव अभिव्यक्ति !
प्रेमी के साकार सपन, शोषण सत्ता के प्रतीक
विहँसे तू लिये निर्बल, दलित का करुण-क्रन्दन !
सन्तप्त हृदय की आरजू, ताज मन का मतवाला अरमान
सभ्यता, संस्कृति रक्षक प्रकृति का नग्न परिहास !
श्रम प्रतिष्ठा, कर्म फल, दान धन की शोभा
शाहजहा की अन्तिम कारावास-निधि, नैतिकता का ह्रास !
शाहजहा का प्यार, मुमताज की याद
ताज तू मानव प्रेम का निर्मल कान्तिमय मोती !
अकाल पडे, प्रजा भूखी मरती, सम्राट शौक उन्मत्त नृत्य
स्वामी छोड चला, सीमा बाध, भाग्य, पथ दुख और त्रास !
तू बुझे दिल का उपवन, प्रेमी उर की मंजिल
रजनी-तम मे प्रकाश स्तम्भ अविश्वास, घृणा मे प्रेम पुंज !
मन मेरा जाने क्यों कहता, हो द्वेष, विक्षोभ से दूर
तुम असफलता, चिन्ताओं का चिंतन, दैव आराधक, प्रणय उपासक
शोक न प्रशंसा कर पाया, मै नही जन मत उपासक
सावधान ! बाज गल डाले भुजंगिनी
सम्भला-यमुना प्यार मृत्यु-आलिंगन !
शाहजहाँ का प्यार, मुमताज की याद
ताज तू मानव प्रेम का निर्मल कान्तिमय मोती !



जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी ॥

—रामायण

माँ

जग-वैभव, विलास चरण-रज—ईश्वर प्रतिरूप जननी !
प्रेम-रूप, अथाह सागर—सींचता कष्ट सह, स्नेह भण्डार,
विश्वास, नेह भरे दुग्ध या अश्रु—करता सहार, उल्कापात
मा रक्त, कर्म मोची नताका—है जयध्वज मान पताका !

पवित्रता प्रतीक, पालन-कर्त्ता, विश्व-उच्चतम आसन महत्ता
मा है माँ, उपमा रहित, अद्वितीय जीवन का माप-दण्ड !
जीवन वीणा का मधुरतम राग, खोज आधार, ज्ञान उद्गम
मानव प्रेम, बलिदान इति मम, स्थिर, फल-रहित कर्म की आन !

ईश्वर पूजित, मर्यादित मा, राम शाश्वत भेद लेखनी
जग-वैभव विलास चरण रज, ईश्वर प्रतिरूप जननी !



मूर्ख के लिए रिवाज तर्क का काम देता है !

—रौचेस्टर

मेरी देश भक्ति अनन्त शान्ति तथा मुक्ति की ओर मेरी यात्रा का एक पडाव मात्र है ! मेरे लिए धर्म से रहित राजनीति की कोई सत्ता नही, राजनीति धर्म की सेविका है !

—गांधी

ईश्वर अपने रहस्य कायरों से नही खुलवाता !

—एमर्सन

कैसे तुझ से प्यार करूँ

प्रभु भक्ति मुझसे होती नही, फिर कैसे तुझसे प्यार करूँ।
माँझी कोई नही टूटी तरणी, कैसे भव-सागर पार करूँ।

गाऊँ कैसे गीत तेरे, मधुर मेरी आवाज नही
जाऊँ कैसे भक्ति सगति मे, पास शब्दो का भण्डार नही।
आकृति तेरी ज्ञात नही, चित्रण चित्र तूलि से कैसे करूँ।

इच्छा प्रबल मेरी, आत्मा स्वतन्त्र कर तुझ मे मिल जाऊँ
बैठ वैराग्य रूपी तरणी, भव सागर पार उतर जाऊँ।
छेद हुए तरणी मे लाखो, लगता डर डूब न जाऊँ।

रूप न तेरा अपना कोई, हर रूप मे आया तू ही
औ मानवता के निष्ठुर, भूले, खोये साथी
शक्ति दे दुखी, पापी जन बढ आगे गले लगाऊँ।

हार चला है राही, पगडडी टढी, घटा भी कोई घिर आई
छोर न इसका कोई, शक्ति विस्तार अनत, अत घडी चल आई
बैठ स्वयँ ईश्वर, खोजे ईश्वर, राम, मन पतित अपना क्या करूँ।



स्वतन्त्रता का गहनतम अथ है कि व्यक्ति स्वयँ अपने स्वाभावानुकूल नियम द्वारा परिपूर्ण की और विकसित और उन्नत हो सके।

—अरविन्द

बिखरे मोती माला के

बिखरे मोती माला के, टूट सपना रहा अधूरा,
आशायें निराशा मे बदली, अपने हुए पराये ।

डगमगाते कदम–छा रहा साँझ का धुँधलका,
ढलती उमर–याद गुजरा जमाना ।
रोती आँखे, तडफता दिल–हँसता ये जहा,
लगते अपने को बेगाने–भरे घर के खजाने ।

चल रहे राह मजिल की–थके मन से,
लगता पहचाना, बनता बेगाना–हर कोई यहा ।
आवाज खो रही शोर मे—चुप्पी बढा रही सन्नाटा,
कसमे टूटी, चाहत बदली—सब नया, नये ।

लिखते है मिटाने को—ढा रहे कुछ नया बनाने को,
खो कर कही—कही कुछ पाने को ।
कशमकश मे राहत पाने—राहत मे कुछ करने के लिए,
जान बेजान होने को–बेजान मे जान लाने के लिए ।



बलवान मे ही स्वतन्त्र रहने की योग्ता है । निबल की स्वतन्त्ता तो मानो पागल के हाथ मे डायनामाइट की घडी है ।

—जवाहरलाल नेहरू

पुकार

इस सुनसान डगर, वीरान नगर मे तुझे पुकारूँ दीनानाथ
बन्ने भार धरा, भवँर बीच तरणी, तुझे पुकारूँ खेवनहार !

भक्तो ने टेरा तुझको, दोडा आया जब जब निबल ने पुकारा
पूजा की रीति न जानी जन्म जन्म साथी स्वयँ भला बुरा विचा
दीन हीन पूजा को खाली हाथ चला आया, बस एक बार थाम लो हा

कोई कहता जग माया, कहे कोई सपना जाल अनोखा फैलाया
कोई बनता वैरागी, फँसा दूजा माया मे, पार न कोई पाया -
भूला धन, दौलत, रिश्ते नाते हृदय प्यार लिए, सुमरूँ जग के नाथ

मुझको दान न देना जगमाया, अपना धाम, और न करना करुणा न
मुझको ज्ञान न देना दश न देना, और न देना मुक्ति वरदान
चाहो तो इस जन को शान्ति, मानव सेवा करने दो होकर साथ !



कपोत स्वतन्त्र रहकर कवड चुगना पसन्द करता है। —अज्ञात
भूल जाना भी स्वतन्त्रता का एक रूप है।
—खलील जिब्रान

अपने सिद्धान्तो के लिए अपनी जगह पर डटे रहकर मर जान
वीरतापूण है, मगर अपने सिद्धान्तो के लिए लडने और जीतने
वास्ते निकल पडना और भी वीरतापूण है।
—फ्रेंकलिन डी० रूजवैल्ट

ईश्वर

कोई तुझे भगवान कहता, कहता कोई तुझे खुदा है
कोई तुझे आदमी मे देखता, कह कोई खुदाई मे रहता है।

मैंने भी खोजा है तुझे गिरजे, मन्दिर, गुरुद्वारो मे
दम तोडती इन्सानियत, चिराग बुझे घर द्वारो मे
वहते पसीने, ढली जवानी, भोले नटखट वाल ग्वालो मे
वतन की मिट्टी, सन्त, शहीदो की लम्बी कतारो मे
हैरान हूँ अन्दाज पर तेरे, जो अपने कर्मो के फल से डरता है।

इस छोटी उम्र मे देख ली, डगर, उम्र लम्बी है तेरी
मिटाता, बनाता है, अनोखी हस्ती है तेरी।
भगवान, यम है, अनूठी कारस्तानियाँ है तेरी
न होता तू—इन्सान भगवान होता, दास्ता ये तेरी।
सत्य कहे कोई, मिट्टी मे उसे तू झूठ कह मिलाता है।

तू समाज के नियम से ऊँचा, कानून, इन्सान से ऊँचा
तू हर अस्त्र-शस्त्र से ऊँचा, विज्ञान, ज्ञान से ऊँचा।
तू मृत्यु आलिंगन से ऊँचा, दैव, क्षण से ऊँचा
तू भगवान क्यो ? मानव से ऊँचा, कम बन्धन से ऊँचा।
जब चलता नही बस किसी का, तुझे राम कहता है।



माँगे बगैर कभी राय न दो।

—जर्मन कहावत

प्रभु गुण गाऊँ, हरि गुण गाऊँ

प्रभु गुण गाऊँ, हरि गुण गाऊँ,
साझ सवेरे सुमिरू — भव-सागर तर जाऊँ,
पर दुःख मे वीर बन्धाऊँ, सुख लाऊँ,
विपदा मे जन जन की ढाल बन पाऊँ।

ममता भूखी माँ, देश सपूत हो जाऊँ,
निर्धन का धन, अन्धे के नैन बन पाऊँ,
निर्बल का बल, अन्याय संग ठन जाऊँ,
प्रभु पाऊँ, पापी सम्मुख न झुक पाऊँ।

आश्रयहीन का आश्रय, सत्य, धर्म रक्षक कहलाऊँ,
समाज सेवा व्रत ले—तन, मन, धन लगाऊँ,
उत्थान गीत बन-नूतन समता भाव जगाऊँ,
श्रम, जन, जग-मर्यादा हित प्राण गवाँऊँ।

लक्ष्य रखना काफी नहीं है उसे प्राप्त करना चाहिये।
—इटालियन कहावत

वाणी से बढ़कर चरित्र की निश्चित परिचायका और कोई चीज नही।
—डिजरायली

जो राय दो, संक्षेप मे दो।
—होरेस

कविता

तुम सदिया याद क्या बोले,—मुझे वरदान मिल गया,
तुम क्या मिले मुझे मेरा निशान मिल गया।

खोकर पाया है मैंने—जीतकर बाजी हार चला,
जन्म-मृत्यु, कर्म निष्क्रियता भेद मिट चला।
भक्ति-द्वार अपमानित जन जहाँ—मैं लौट चला।
अनन्त जन्म का पथिक मैं—निर्वाण पा चला।

आँधियाँ, तूफान चल तो क्या—जब तक चप्पू मेरे हाथ,
बहकाने, लुभाने में क्या—जब तक किनारा मेरे साथ।
नफरत, दुश्मनी किस से—मेरा चंद दिन का है साथ,
सन्यास, निराशा क्यों—जब स्वर्ग, धरा अपने साथ।

महान पुरुष अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थिति में भी धीरज नहीं छोड़ते।

—अज्ञात

जो लाभ आत्मा की प्रतिष्ठा के साथ न हो, उसे कौन चाहेगा ?

—महाभारत

दुनिया हटकर उस शख्स को रास्ता दे देती है जो जानता है कि वह कहाँ जा रहा है।

—डी० एस० जौडन

कौन कहे तुझ, मुझ बिन जग सूना

कौन कहे तुझ, मुझ बिन जग सूना
जन आ, जाता रहं न प्रभु पथ सूना।

एक धन जोड़े मन ढोले, पाप की गागर शिर धरे
दूजा युद्ध, हिंसा में डूबा, जीवन से मुख मोड़े
युग युग प्रलय, उत्पत्ति, रहे न शान्ति, सेवा-पथ सूना।
कौन कहे तुझ मुझ बिन जग सूना।

जन्म, मरण एक, कौन प्रकृति सिद्धान्त अनेक
आदि, अन्त, मध्य, माटी वोही, रूप अनेक
संहार, द्वेष, संशय बढ़ी, रहे न मानवता, प्रेम पथ सूना।
कौन कहे तुझ मुझ बिन जग सूना।

ज्ञानी सोचे, समझे, मूढ भाग्य रोये, कलपे
पथी बाट, झगड़े, विश्वासी उसको पा जाये
हाथ खाली आ सब पाये, खोये प्रभु-पथ हीना।
कौन कहे तुझ मुझ बिन जग सूना।



जो मन से पहले तन को सजाते हैं, वे मानो तलवार से ज्य
मियान के प्रशंसक हैं।

—लार्ड होव

शत्रु कौन है ? अकर्मण्यता, उद्योगहीनता।

—शंकराचार्य

मेघा जी भर बरसो रे

किसने नाते, बन्धन जोडे—सीमा पार भाव, प्यार लिए
किसने आशाओ के ताने जोडे—अद्‌भुत वैभव, अतीत लिए
आग लगी तन मन मे—मेघा जी भर बरसो रे।

जी पिय दरस तरसो—घन गरजो, हरसो रे
अश्रु-सरित लखे न कोई—हर्षित जन हर कोई
मोह जग, तन न हटा—सत्य, निज पीर लगी हर कोई
आग लगी तन, मन मे—मेघा जी भर बरसो रे।



दुनिया मे प्रतिध्वनिया बहुत है, ध्वनियां कम।
—गेटे

महापुरुष मे महापुरुष पैदा करने की शक्ति होनी ही चाहिए।
—समर्थ गुरु रामदास

बडे काम करो, पर बडे वायदे न करो।
—पिथागोरस

बुरे शब्द सुलक्षणो का घात करते है।
—डच कहावत

आदमी जैसा होता है उसके मुँह से वैसी ही बात निकलती है।
—पुर्तगाली कहावत

जग मे कौन अपना, कौन पराया

जग म कान अपना, कौन पराया—चर, अचर प्रभु छाया
कोन खिंचे भेद रेख–जग में मृत्यु, प्रभु चरण सब एक समान
त अमृत, पण्डित मूढ़—मंत्र विकर्म, ज्ञान उनका एक समान
मूख बाटे, कृपण जोडे–प्रेमी हिये अपरिग्रह, शांत रस बरसाया।
जग मे कौन अपना कौन पराया—चर, अचर प्रभु, छाया।

रिश्ते नाते, ज गु बान्धव—वैभव, धन सब मर्त्य
बीहड राह, घोर तिमिर—निशि, दिवस, सृष्टि चक्र सत्य
एक पथ, एक लकीर मूढ़ झगडे–भक्त हृदय समत्व संजोया।
जग में कौन अपना कौन पराया—चर, अचर प्रभु छाया।

धर्म, पथ, देश, मानवता—सत्य, प्रिय कर्तव्य डगर
देव प्रभु, असुर-यम, भेद-युद्ध, स्पर्धा, द्वेष, विष-गागर,
पुनजन्म, जात पात, त, पाखण्ड धोये–जगती प्रकाश दर्शाया।
जग म कौन अपना कौन पराया—चर, अचर प्रभु छाया।

□

जो कुछ हम ह अपने विचारो द्वारा ही बने ह।
—बुद्ध

मेरा आदश है समान वितरण।
—गाधी

विनती

हम आये प्रभु शरण तुम्हारी,
नैया भवसागर पार करो।

तुम जग पालक, करुणा कर,
निज उर शान्ति, प्रकाश भरो।

हम भटके जग-माया में
पाप की गागर शीष धरे

तुम परब्रह्म, जग-आत्म
मन चंचल, कैसे आत्म ज्ञान करे।

तुम जन, जीवन, मन रक्षक,
सुपथ, वैभव, ज्ञान दान करो।

हम आये शरण तुम्हारी,
निर्भय, पावन, प्रेम करो।

तुम सत्य, निर्बल के रक्षक,
कर्ता, सृष्टिपति नव निर्माण करो।

नित अतिथि, संतन की सेवा,
कर्मयोग भक्ति में स्थित करो।

हम संकीर्णता, द्वेष लिए
भेद अपना पराया दूर करो।

हम जग पथ थक हारे
ज्ञान नूतन जीवन प्रचार करो !

लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा संग विराजे
जन्म जन्म के पाप क्षमा करो !

दश, कीर्ति, शुभ मन मोहे
भगवन आशीष दो, साथ रहो !

सत्य-रूप सब सृष्टि पसारी
मन्त्र-मय ईष्ट देव राम वरे !

निर्वाण, स्वर्ग, धर्म सब अपने
धरा पर अवतरण हो रूपांतरित क

तृप्त मन साधक साधन साधे
नाद अन्तर में बहु भाँत करो।

क्षमा, दया चित्त धर परिवर्तन करें
तुम शक्ति जन जन कृपा करो।



विनोदवृत्ति जीवन का रस है।

देश का भविष्य

देश का भविष्य—
जन-जीवन की लय
श्रम, पथ प्रदर्शन ,
नहीं—मिथ्या प्रचार,
प्रसार !
यह भ्रष्टाचार, अत्याचार-
राजनैतिक उपचार ,
भाषणो का उपहार—है समाजवाद ?
नैतिकता की हार !



पुकार

तुम सो रहे हो—गवा गाठ का सब कुछ
चोर अधियारी, घटाटोप रात मे—
तक रहे ह इस ओर
तुम निश्चिन्त, नही समझोगे,
क्या बचा है उनके लिए अब तुम्हारे पास !
उन्ह प्रतीक्षा है—
तुम घर से बाहर निकलो ,
और अन्दर घुस चोर चोर का शोर मचा दें !



हम जग पथ थक हारे
तन नूतन जीवन सचार करो !

लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा सग विराजे
जन्म जन्म के पाप क्षमा करो !

यश, कीर्ति, शुभ मन मोहे
भगवन आशीष दो, साथ रहो !

सत्य-रूप सर्व सष्टि पसारी
मन्त्र-मय ईष्ट देव राम वरे !

निर्वाण, स्वग, धर्म सब अपने
धरा पर अवतरण हो रूपातरित करो !

तृप्त मन साधक साधन साधे
नाद अन्तर में वहु भात करो।

क्षमा, दया चित्त धर परिवर्तन करे
तुम शक्ति जन जन कृपा करो।



विनोदवृत्ति जीवन का रस है।

—अरविंद

देश का भविष्य

देश का भविष्य—
जन जीवन की लय
श्रम, पथ प्रदर्शन ,
नही—मिथ्या प्रचार,
प्रसार !
यह भ्रष्टाचार, अत्याचार-
राजनैतिक उपचार ,
भाषणो का उपहार—है समाजवाद ?
नैतिकता की हार !



पुकार

तुम सो रहे हो—गवा गाठ का सब कुछ
चोर अधिकारी, घटाटोप रात मे—
तक रहे है इस ओर
तुम निश्चिन्त, नही समझोगे,
क्या बचा है उनके लिए अब तुम्हारे पास !
उन्हे प्रतीक्षा है—
तुम घर से बाहर निकलो ,
और अन्दर घुस चोर चोर का शोर मचा दे !



यह मेघ

यह मेघ—
अद्भुत, अनगिनत ,
प्रति पल बनते, बिगडते,
मन-चाहे रूपो का दर्पण !

तैरता नभ मे—
ज्यो उठते मन मे भाव
नेह जीवन बरसाता,
गर्जन—ज्यो हो क्रोध भाव !

मतवाला, जब चलता इठलाता—
प्रत्येक राह बनती, इसकी , और
प्रत्येक छोर-इसकी मंजिल !

रंग बदलता, भरता पल पल
जीवन का माप-दण्ड,
यह मेघ !

□

आत्म-विश्वास वीरता की जान है ।

—एमर्सन

जो बात सिद्धान्ततः गलत है वह व्यवहार में उचित नहीं है ।

—डा० राजेन्द्र प्रसाद

बोलता धरती का प्यार

किसान का परिश्रम,
श्रमिक का श्रम,
जवान का रक्त,
जन-शक्ति का आदर,
देश-चरित्र का निर्माण,
सर्वोदय, सामाजिक उत्थान
भरता है जीवन मे साहस।

गाधी का त्याग,
बुद्ध का उपदेश,
लाजपतराय की ललकार,
भगतसिंह का वार,
सुभाष की पुकार,
हैं दर्शन-सार
बोलता धरती का प्यार।

मेरे देश का शान्ति-सदेश,
मानव अधिकारो की सुरक्षा का प्रयत्न,
ससार की सुख, समृद्धि मे योगदान,
युद्ध, विनाश का विरोध
मजिल पर बढते पग—करते सपने साकार।

—

सब से बडी कठिनाई मे से सबसे बडी शक्ति निकलती है।
—अरविन्द घोष

क्रान्ति

हम शिक्षित है,
कानून, धर्म के रक्षक,
मानव, मानवता , शान्ति सेवा मे रत
आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर ,
नैतिकता के समर्थक,
राजनीति मे सहिष्णु।

क्रोध, घृणा से दूर—आत्मसंयमी ,
सहृदय, मित्र और सहायक और
निर्बल, दलित के अधिवक्ता।

फिर भी यह देश,
भूमि, समाज, ये मित्र—
समाज, सरकार के नियम
हम पर प्रहार करते है,
आघात करते रहे है!

जब यह सब असमर्थ हैं—
समानता लाने मे,
अधिकारो की रक्षा करने म,
अपने कर्तव्य को निभाने मे—तो
हमे अधिकार है क्रान्ति का ,
जिसमे चाहे न्यायोचित शक्ति का प्रयोग क्यो न हो—
और चाहे रक्त की नदियाँ, बन जाये समुद्र।

□

रुपाँतरित-यथार्थ

मेरे देश के धर्म प्रवतको, सन्तो,
देश-भक्त नेताओ, शहीदो,
कर्मठ—श्रमिक, कर्मचारी , और
मेरे देश के स्वतन्त्रता सैनिको ने—
एक स्वप्न देखा–
देश, जनता के भविष्य का ,

जब देश मे निधनता, भूख न होगी,
शिक्षा का प्रचार होगा—
देश-चरित्र का निर्माण होगा,
मातृभूमि का जग मे उन्नत भाल होगा।

हमे कर्म मे सलग्न रहना होगा,
सतत प्रयत्न, सतत प्रयास,
कल्पना का करना होगा, रुपांतरित-यथार्थ
होने के लिए पूर्वजो के ऋण से मुक्त,
सपने को करना होगा साकार।



विनोद पर हमेशा विवेक का अ कुश रहना चाहिए।
—एडीसन

यह गहरे खड मे उठा स्तम्भ,
चारा ओर दूर दूर तक धरती से अलग, थलग,
और जिसकी चोटी पर बैठे है, समाज सुधारक,
शासक, नेता और अधिकारी

जिनको दम्भ है देश सेवा, जन सुधार का
हालाकि वह भी स्तम्भ की तरह ही खोखले है।
सच्ची आत्माये उतर न पायेगी इतने निम्न स्तर पर,
और यदि उतर भी जाये—
तो उनके भार को सह न पायेगा यह स्तम्भ।

इन महान आत्माओ को—अपने कर्मो से खंड भरने दो,
और जब हो वास्तविक, ठोस स्तम्भ का निर्माण—
तुम्हे करना होगा उसमे सहयोग।

□

ईश्वर ऐसी कोई विपत्ति नही भेजता जो सहन न की

इटालियन

सामर्थ्य अब भी है

ठीक है मैं निर्धन हूँ, भोला हूँ—
अशिक्षित, देहाती, सामाजिक शिष्टाचार से अनभिज्ञ हूँ -
परन्तु आचारहीन, भुलक्कड और झूठा नही।
मुझ मे अपने, अपने समाज और देश के भले-बुरे का
भेद करने की सामर्थ्य अब भी है।

मैं बहल गया था कुछ समय के लिए—
झूठी बातो, प्रतिज्ञाओं के बहलावे, छलावे मे
परन्तु यह भूखा पेट, उघडा तन,
कडकते जाडे मे ठिठरता,
झुलसती लू मे तपता
खुले अम्बर के नीचे शून्य मे तकता,
और हो गये क्षितिज पार के-सपनो की नापता दूरी,
विवश कर देता है मुझे परिवर्तन के लिए,
प्रयास करने के लिए, और नया प्रयोग करने के लिए—
जिससे मैं आत्म निर्भर, स्वतन्त्र हो—
समाजवाद मे अपनी आस्था बनाए रख सकू।

समय की व्यवस्था सुव्यवस्थित मन की अचूक निशानी है।
—पिटमैन

क्यो न खेले हम, प्राप्ति की सम्भावनाओ से

इसे न समझो भवन, नीव—
यह है प्रथम ईट, जो उठा खँडहर से
रखो है पाताल की गहराईयो मे
प्रथम चरण है लम्बी राह मे,
प्रथम कम है लक्ष्य प्राप्ति मे।

न भूलो यह रक्त है-उबाल तो पानी मे भी आता है
जब पीछे हटते-हटते, पीठ लग जाती है दीवार से,
तो न भूलो—
मग्कर भी मनुष्य गिरता है, तो गिरता है आगे की ही ओर!

अब कुछ नही बाकी पास-जिसे खो सके हम,
फिर भी क्यो न खेलें हम-प्राप्ति की सम्भावनाओ से।



समाज की समृद्धी समान वितरण मे ही नहीं बल्कि उत्पादन की वृद्धि मे भी है।

